अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) ■ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार ■ एक प्रति २ आना

वर्ष–३, अंक–२२ ■ राजघाट, काशी ■ शुक्रवार, १ मार्च, '५७

लोकनीति की ओर

जनतंत्र का भविष्य राजनीतिक और कूटनीतिक लोगों पर सौंप कर नहीं रहा जा सकता। जो राजनीतिक क्षेत्रों से आज बाहर हैं या जिन्हें राजनीति में से बाहर पड़ने की दृष्टि और हिम्मत प्राप्त है, ऐसे लोगों पर ही जनतंत्र के भविष्य की जिम्मेवारी है। अर्थात् राजनीति से बाहर काम करने वाले लोगों का मार्ग दुर्गम और कठिन चढ़ाई का अवश्य है, लेकिन व्यक्ति-स्वातंत्र्य से प्रेरित ऐसे पथिकों की निष्ठा, लगन और हिम्मत पर ही जनतंत्र का भविष्य अवलंबित है, यह भी स्पष्ट है।

—मानवेंद्रनाथ रॉय

ग्रामदान द्वारा वर्णाश्रम-धर्म का नवसंस्करण

(विनोबा)

कुछ लोग पूछते हैं कि क्यों भाई, तुम सारे गाँव को ग्रामदानी बनाने जा रहे हो, तो क्या वर्णाश्रम-भेद भी मिटा दोगे? धर्म सूक्ष्म होता है। बिलकुल ऊपर-ऊपर से देखने से वह मालूम नहीं होता है। अंदर से देखना पड़ता है, तब पता चलता है। चार वर्ण और चार आश्रम बाह्य वेष नहीं, विचार और अनुभव हैं। चार वर्ण की कल्पना लोगों में उच्च-नीच के भेद पैदा करने के लिए नहीं, समाज के गुण-विकास के लिए हैं। चार आश्रम भी गुण-विकास के लिए हैं। हम तो नये सिरे से चार वर्ण और चार आश्रम खड़े करेंगे और हम चाहेंगे कि हर एक व्यक्ति में चार आश्रम और चार वर्ण हो जायँ!

ग्रामदानवाले गाँवों में किस प्रकार चार वर्ण और चार आश्रमों की स्थापना होती है, उसका हमने एक छोटा-सा सूत्र बनाया है। जैसे मेनूक्कण्डार का सूत्र है, जैसे ब्रह्मसूत्र है, वैसे चार शब्दों में हमने चार वर्ण और चार आश्रम रख दिये हैं। वे चार गुण जिनमें हैं, उनमें चार वर्ण हैं और चार आश्रम भी हैं। पहले चार वर्ण की बात लेंगे।

ब्राह्मण-वर्ण का रूप

चारों वर्ण अत्यन्त पवित्र होते हैं। लोगों का ख्याल है कि कुछ वर्ण ऊँचे और कुछ वर्ण नीचे होते हैं, पर बात ऐसी नहीं है। गीता ने कहा है कि 'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धि लभते नरः।'–जो अपने कर्तव्य में परायण होकर निष्काम बुद्धि से परमेश्वर को सेवा समर्पण करेगा, वह समान भाव से मोक्ष पायेगा। हम कहना चाहते हैं कि जहाँ चित्त में शम-शांति है, वह ब्राह्मण का लक्षण है। हम चाहते हैं कि ग्रामदान के गाँवों में शम हो, शांति हो; सबके हृदय में शम हो। क्या आप आज के गाँवों में शांति देखते हैं? क्या देश में भी शांति है? हाँ, शांति की चाह तो है, परंतु राह ली है अशांति की और अशांति की राह पर चल कर शांति की चाह रखते हैं! शांति की स्थापना तो तब होगी, जब सब लोगों के हृदय के दुःख मिट जायेंगे। उन दुःखों के कारणों में एक साधारण दुःख है कि लोगों को सर्व-सामान्य चीजें भी मुहय्या नहीं होती हैं; और दूसरा कारण यह है कि कुछ लोगों के पास चीजें ज्यादा पड़ी हैं; इससे उनके चित्त को शांति नहीं प्राप्त होती है!

जैसे शरीर के लिए कम-से-कम जितना चाहिए, उतना यदि नहीं मिलता है, तो शांति नहीं रहती है, वैसे शरीर के लिए जो चाहिए, उससे ज्यादा मिलता है, तो भी शांति नहीं रहती है। इसलिए जहाँ शम की स्थापना होगी, वहाँ ब्राह्मण-वर्ण की प्रतिष्ठा होगी। हमको कोई शक नहीं है कि ग्रामदान के गाँव में दूसरे किसी भी गाँव से ज्यादा ही शम होगा।

क्षत्रिय-वर्ण

चार वर्ण में दूसरा वर्ण है, क्षत्रिय वर्ण। हर एक सरकार के पीछे शस्त्रास्त्र का बल रहता है। इससे सारी दुनिया निर्वीर्य और भयभीत बनी है। क्षत्रिय का लक्षण है—निर्भयता। निर्भयता कोई शस्त्रास्त्र से नहीं आती है। निर्भयता की स्थापना करने के लिए हम दम-रूपी क्षत्रिय वर्ण की स्थापना करते हैं। दम याने अपने पर ज़ाब्ता, अंकुश रखना। जहाँ सब लोग अपने पर काबू नहीं कर पाते हैं, जहाँ सब लोग अपने पर दमन नहीं कर पाते हैं, वहाँ बाहर से दमन करने की बात आती है। हम समझते हैं कि ग्रामदान के गाँव में दूसरे किसी गाँवों से दम की प्रतिष्ठा अधिक होगी। दूसरे का छीनने की इच्छा होगी ही नहीं, क्योंकि कोई दूसरा है ही नहीं, सब अपने ही हैं। सारे गाँव की जमीन एक हो गयी, मालकियत मिट गयी, तो उस हालत में हर एक मनुष्य अपने पर दमन रखेगा। इस दम को हम क्षत्रिय-वर्ण की स्थापना कहते हैं।

वैश्य-वर्ण

तीसरा है, वैश्यवर्ण। हिन्दुस्तान में सब लोगों को मालूम है कि वैश्य के लक्षणों का एक शब्द में अगर वर्णन करना है, तो वह लक्षण है—दया। हिंदुस्तान में एक तो ब्राह्मण मांसाहार को छोड़े हुए हैं, परन्तु उनसे भी ज्यादा तादाद में वैश्य हैं। मांसाहार छोड़े हुए लोगों की गिनती की जाय, तो वैश्यों की संख्या ज्यादा निकलेगी। वैश्य का लक्षण ही यह है कि दीनों का सँभाल करना, उनके वास्ते संग्रह करना, अपने संग्रह से सबकी रक्षा करना। वैश्य का दया से बढ़ कर दूसरा कोई गुण ही नहीं हो सकता। ऐसे वैश्यों की स्थापना ग्रामदान के गाँव में होगी। दया और करुणा के बिना ग्रामदान का आरंभ ही

चुनाव के तीन काल !

जो लोग चुनाव के लिए अपना सर्वस्व दे देते हैं, उनके जीवन का विचार ही दूसरा है! जैसे व्याकरण में तीन ही काल होते हैं, चौथा काल है ही नहीं; वैसे उनके लिए भी तीन काल होते हैं। एक है, चुनाव-काल, दूसरा है, उत्तर चुनाव-काल, तीसरा है, पूर्व-चुनाव-काल। चौथा कोई काल नहीं है। इसलिए उनको दूसरा कोई काम करने के लिए फुर्सत ही नहीं मिल सकती। चुनाव-काल चुनाव में चला जाता है। उत्तर-चुनाव-काल उसके बाद के इन्तजाम में चला जाता है, जो दो-तीन साल का होता है और इतने में नये चुनाव का पूर्व-काल आ जाता है! इस तरह आदि, मध्य और अंत जैसे भक्तों के लिए माने गये हैं, वैसे ही चुनाव भी इनके लिए आदि, मध्य, और अंत में परमेश्वर के समान ही हैं!

(कारैक्कडी, रामनाड, १५–२–५७) —विनोबा

www.vinoba.in

नहीं होता है। आज दया कहाँ है ? दिल अत्यंत निठुर बने हैं। दूसरों की परेशानियाँ देखते रहते हैं, परंतु उनके लिए कुछ करने की हमको इच्छा ही नहीं होती है। इसलिए वैश्य वर्ण की, दया की हम स्थापना करना चाहते हैं।

शूद्र-वर्ण लक्षण : श्रद्धा

चौथा वर्ण है, शूद्र। शूद्र के बिना दुनिया चल ही नहीं सकती। शूद्र का लक्षण है—श्रद्धा। शूद्र के लक्षणों का अगर एक वर्णन शब्द में ही करना है, तो श्रद्धा उसका लक्षण है। शूद्र सेवा-प्रधान होता है। बिना श्रद्धा और भक्ति के सेवा हो नहीं सकती, इसलिए शूद्र का मुख्य गुण सेवा है और श्रद्धा उसका अंतर-रूप है। ग्रामदान के गाँव के बच्चों के दिल में श्रद्धा ही पैदा होगी। ग्रामदानी गाँव में किसीका पिता मर गया, तो भले एक पिता मर गया हो, परंतु ३५० पिता और मिल गये ! ग्रामदान के गाँव में एक-एक माता को तीन सौ, चार सौ लड़के होंगे। इसलिए स्वतंत्र अनाथाश्रम खोलने की भी कोई जरूरत नहीं रहेगी। तब उन लड़कों को समाज के लिए कितनी श्रद्धा महसूस होगी ? जिस समाज में हम पैदा हुए, वह समाज इतना दयालु और प्रेमी है कि हम सभी बच्चों की वह रक्षा बराबर करता है, ऐसा वे बचपन से ही सीखेंगे।

चार आश्रम !

अब चार आश्रमों की स्थापना ग्रामदान के गाँव में कैसे होगी, यह देखें।

पहला है, संन्यासाश्रम। समाज को संन्यासी की अत्यंत आवश्यकता है, यह सबको मालूम है, क्योंकि संन्यासी रहा, तो सबकी सेवा करने के लिए मुफ्त का नौकर मिल गया ! वह सर्वत्र ज्ञानप्रचार करता चला जायेगा। संन्यासी का लक्षण है—शम। जहाँ चित्त में शांति नहीं है,वहाँ संन्यास नहीं है। तो संन्यासी की परीक्षा है—शम, शांति। ग्रामदान से इसी शम-रूपी संन्यास-आश्रम की हम स्थापना करना चाहते हैं।

दूसरा है, वानप्रस्थाश्रम। वानप्रस्थाश्रम का लक्षण है—दम। हमें तपस्या से इन्द्रियों का दमन करना है, अपने को संपूर्ण जीत लेना है। इस तरह जहाँ दम का गुण आ गया, वहाँ वानप्रस्थाश्रम की स्थापना हो गयी। ग्रामदान से हम इस दम-रूपी वानप्रस्थाश्रम की स्थापना करना चाहते हैं।

तीसरा आश्रम है, गृहस्थाश्रम। गृहस्थाश्रम का लक्षण है—दया। 'तिरुक्कुरल' ने भी कहा है कि गृहस्थ का सबसे श्रेष्ठ गुण है, दया, करुणा, प्रेम। इसलिए जहाँ दया की प्रतिष्ठा हो गयी, वहाँ गृहस्थाश्रम की स्थापना हो गयी। ग्रामदानी गाँव में हम दया-रूपी गृहस्थाश्रम की स्थापना करना चाहते हैं।

चौथा आश्रम है, ब्रह्मचर्याश्रम। ब्रह्मचर्याश्रम का लक्षण है—श्रद्धा। जहाँ श्रद्धा की प्रतिष्ठा हो गयी, वहाँ ब्रह्मचर्याश्रम की स्थापना हो गयी। ग्रामदान से हम श्रद्धारूपी ब्रह्मचर्याश्रम की ही स्थापना करना हम चाहते हैं।

इन चार गुणों की याने शम-दम, दया और श्रद्धा की-समाज में प्रतिष्ठा हो गयी, तो चार वर्णों की स्थापना हो गयी !

शम, दम, दया और श्रद्धा; इन चार शब्दों में चार वर्ण और चार आश्रम आ गये। 'शम, दम, दया, श्रद्धा' यह ग्रामदान का सूत्र है। इस प्रकार से ग्रामदानी गाँव बनेंगे, तो धर्मस्थापना, धर्मचक्रप्रवर्तन होगा या नहीं, यह जनता ही सोचे !

शाक्कोट्टै, रामनाड, १४-२-'५७

यह आंदोलन आध्यात्मिक है

"...हम कहना चाहते हैं कि यह अगर केवल व्यावहारिक और आर्थिक कार्यक्रम होता, तो सतत पैदल घूमना भी मूर्खता होती ! उस कार्यक्रम के लिए ऐसी कोई जरूरत नहीं है कि पैदल घूमने का ही आग्रह रखा जाय ! जरूरत हुई, तो पैदल, मोटर, ट्रेन और हवाई जहाज का भी उपयोग किया जा सकता था। जो शख्स केवल आर्थिक कार्यक्रम उठाता है, वह पैदल ही घूमने की मर्यादा बांध लेगा, तो वह एकदम दकियानूस बनेगा और काम भी कारगर नहीं होगा। पर बाबा का तो दावा है कि यह आंदोलन आध्यात्मिक मूल्यों को बदलने का आंदोलन है, भक्तिमार्ग की स्थापना का, धर्म-चक्र-प्रवर्तन का आंदोलन है। —विनोबा

१९५७ में आर्थिक क्रांति का आवाहन

(गोरा)

जैसे भारत के इतिहास में, उसी प्रकार सारे संसार के इतिहास में सन् '५७ का एक विशेष महत्त्व है। गांधीजी के आने के पूर्व, अर्थात् १९२० के पहले स्वतंत्रता का युद्ध वैधानिक आंदोलन के रूप में ही था। उसके कारण माँटेग्यु-चेम्स्फर्ड-सुधार सामने रखे गये। राजकीय सुधारों के लिए जो प्रयास हुए, वे बाद में आने वाली राजनैतिक क्रांति के लिए मददगार साबित हुए। फिर १९२० में राजनैतिक क्रांति का प्रारंभ हुआ।

इसी प्रकार १९५७ में आर्थिक क्रांति की शुरुआत होने वाली है। १९५७ के पूर्व आर्थिक समस्या के लिए हुए प्रयत्न सन् '५७ में सामूहिक रूप लेकर आर्थिक क्रांति में रूपांतरित होना मुमकिन है। देश में उसके चिह्न हमें दिखायी दे रहे हैं।

अब सन् '५७ के पहले आर्थिक समता के लिए क्रांतिकारक प्रयत्न नहीं हुए थे। जो प्रयत्न हुए, वे भिन्न-भिन्न प्रकार के सुधारात्मक प्रयत्न ही रहे। भूदानयज्ञ भी शुरू में ऐसा ही था। पर वह अब बढ़ते-बढ़ते भूक्रान्ति में परिवर्तित हो गया। '५७ से तंत्र-परिवर्तन एवं निधि-मुक्ति के निर्णयों की बदौलत आंदोलन एक नये क्षेत्र में पदार्पण कर रहा है। अब तक कुछ समितियों के द्वारा, कुछ कार्यकर्ताओं के द्वारा चलाया हुआ यह आंदोलन था; किन्तु वह अब आम जनता में प्रवेश कर रहा है।

सन् १९२० में राजनैतिक आंदोलन को क्रांतिकारक स्वरूप प्राप्त होते ही विद्यार्थियों ने तथा शिक्षकों ने स्कूल-कॉलेज छोड़ दिये। वकीलों ने कोर्ट छोड़े। अलग-अलग होने वाले प्रयत्न एकोन्मुख हुए। हर एक हिन्दुस्तानी गांधीजी के नेतृत्व में स्वातन्त्र्य-संग्राम में भाग लेना अपना कर्तव्य मानने लगा। कितने भी कष्ट सहने पड़ें, तो भी लोगों ने हँसते हुए उन्हें सह लिया और आन्दोलन आगे बढ़ता ही गया। उसी प्रकार आज आर्थिक क्रांति का ध्येय है—व्यक्तिगत स्वामित्व का विसर्जन और ग्राम-राज्य की स्थापना। ध्येय तक पहुँचे बिना यह आंदोलन रुकेगा नहीं। पूरा ध्येय प्राप्त होने तक यह आंदोलन क्रांतिकारी रूप में चलता रहेगा। इस विश्वास के कारण ही इस आर्थिक क्रांति को सफल करने के लिए सब लोग, विशेषतया युवक-जन अपने-अपने काम बाजू में रख कर इसमें कूद पड़ेंगे, इसमें संदेह नहीं। इस क्रांति-कार्य के लिए फिर से त्याग की धारा बह निकलनी चाहिए। महात्मा गांधीजी ने जब देश के सामने रचनात्मक कार्यक्रम का एक सुव्यवस्थित आलेख रखा, तब उन्होंने उसमें तेरह अंश जोड़े और अंत में उन्होंने "आर्थिक समता की प्राप्ति के लिए प्रयत्न," यह अंश भी रखा। इसमें सबसे पहला वाक्य, जो उन्होंने लिखा है, इस प्रकार है—"अहिंसायुक्त स्वराज्य के लिए आर्थिक समता कुंजी का काम करती है।" इस तरह आर्थिक समता रचनात्मक कार्य का प्राण है। आर्थिक समता के लिए प्रयत्न किये बिना रचनात्मक कार्यक्रम अमल में लाने के कितने ही प्रयत्न किये जायँ, तो वह सुधार का ही काम होगा, क्रांति का नहीं। इसलिए आश्रम चलाने वाले लोगों तथा रचनात्मक काम करने वाले कार्यकर्ताओं को इस भूक्रांति में भाग लेने का मौका अब आ गया है। किस काम को प्रधान कहें, किसे गौण, यह विवेक हमें करना होगा। क्रांति-कार्य का प्रथम स्थान और सुधार-कार्य का दूसरा स्थान हुआ करता है, यह स्पष्ट ही है।

(मूल तेलगू)

सरकारी सेवकों से—

सरकारी सेवक जनता की सेवा के लिए नियुक्त किये गये हैं और हमारे जैसे सेवक भी जन-सेवा का कार्य करते हैं। दोनों का कार्य एक जैसा है। "भूदान-यज्ञ" के ता. १५-२-'५७ के अंक में प्रकाशित विनोबाजी के भाषण में इस संबंध में अच्छा विश्लेषण है। राष्ट्रपिता बापू ने महानिर्वाण के पूर्व अपना जो अंतिम प्रवचन दिया था, उसमें से भी निम्न अंश की ओर हम ऐसे सेवकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं :

> "राजनैतिक स्वतंत्रता के बाद अब हिंदुस्तान को शहरों और कस्बों से अपना ध्यान हटा कर सात लाख गाँवों के लिए सामाजिक, भौतिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करनी है। हिंदुस्तान जैसे-जैसे अपने इस लोकराज्य के लक्ष्य की तरफ प्रगति करेगा, वैसे-वैसे नागरिक-शक्ति सैनिक-शक्ति से अधिक प्रबल और प्रभावशाली बनेगी।"

इससे विनोबाजी के निवेदन का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। हमें पूरा भरोसा है कि सरकारी सेवक इसे ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे और अपना सहयोग भूदान-यज्ञ को सफल बनाने में देने की कृपा करेंगे। —(बाबा) राघवदास

---

www.vinoba.in

जीवन दो टुकड़ों में नहीं बँट सकता !

(विनोबा)

दुनिया में अच्छे सेवकों के "चिंतनमय सेवा करने वाले" लोग और "सेवामय चिंतन करने वाले" लोग, ऐसे दो वर्ग पड़े हैं। मैं उन सेवकों की बात नहीं करता, जो नाममात्र की सेवा करके उसमें से व्यक्तिगत लाभ उठाना चाहते हैं ! वे सेवक हैं ही नहीं। ऐसे महत्त्वाकांक्षी लोगों को मैं सेवक नहीं कहता हूँ। लेकिन जो सचमुच सेवक हैं, उनके ये दो-ही वर्ग हैं।

भूदान-ग्रामदान आदि में हम इन दोनों विचारों को बिलकुल एक भूमिका में लाना चाहते हैं। उन दोनों का भेद ही मिटा देना चाहते हैं। जैसे मेरा कुल का कुल शरीर, मन, इंद्रियाँ, शक्तियाँ, सभी समाज को समर्पण है और समाज में सृष्टि भी आ गयी, तो मैं अपनी कोई अलग ताकत अपने लिए अलग नहीं रखता। जब मैं अपने लिए कोई शक्ति नहीं रखता, समाज को सर्वस्व-समर्पण कर देता हूँ, तब मेरी अपनी व्यक्तिगत गहराई भी एकदम बढ़ जाती है, उसमें से अहंकार छूट जाता है। समाज-कार्य करने के लिए ही मेरा शरीर, मन इत्यादि सब कुछ हैं, यह मैंने माना, इसलिए अपनी व्यक्तिगत चिंता मैंने छोड़ दी। इसका परिणाम यह हुआ कि मेरी व्यक्तिगत गहराई एकदम से बढ़ गयी। याने गहराई साधने के लिए मुझे सामाजिक सेवा कम नहीं करनी पड़ेगी। मैं जब अपने बारे में सोचता हूँ, तो मैं यह भेद नहीं कर सकता हूँ कि जब मैं खाने के लिए बैठता हूँ, तो अब यह मैं अपना निजी कार्य करने जा रहा हूँ, या सोने के लिए जा रहा हूँ तो वह भी निजी कार्य करने जा रहा हूँ। अपने उन कार्यक्रमों को मैं अपना निजी, व्यक्तिगत कार्यक्रम नहीं मान सकता। मेरा खाना और सोना भी सामाजिक जिम्मेवारी है, समाज-सेवा का एक अंग है, जैसे रात को ठीक समय सोना, निःस्वप्न निद्रा की प्राप्ति करना, ठीक समय पर उठना, यह सारा सामाजिक सेवा के कार्यक्रम का अंग है, ऐसा मैं समझता हूँ। मुझे यह भास नहीं होता कि मैं इतना समय सामाजिक सेवा में लगाता हूँ। और इतने घंटे व्यक्तिगत काम में लगाता हूँ ! बल्कि २४ घंटों में मेरी जितनी क्रियाएँ होती हैं, वे सबकी सब सामाजिक सेवा की होती हैं, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ। अभी मैं आपके सामने कुछ बोल रहा हूँ, उपदेश दे रहा हूँ, तो मुझे लगता है कि यह सामाजिक कार्य है। पर मुझे यह भास नहीं होता कि इसमें मेरा व्यक्तिगत कार्य नहीं हो रहा है। मुझे अनुभव होता है कि मैं चौबीसों घंटे व्यक्तिगत कार्य करता हूँ। मुझे ऐसा भी भास होता है कि मैं २४ घंटे सामूहिक कार्य करता हूँ। इस व्याख्यान से आप जितने ऊँचे चढ़ने वाले या नीचे गिरने वाले होंगे, उतना ही मैं भी ऊँचा चढ़ने वाला या नीचे गिरने वाला हूँ। इससे उलटे, मैं जब कभी वेदाध्ययन करने के लिए बैठता हूँ, उस समय मेरे पास कोई नहीं रहता है, बिलकुल एकान्त में मैं वेदाध्यान करता हूँ। दीख पड़ेगा कि वह मेरा व्यक्तिगत कार्य हो रहा है। उसमें व्यक्तिगत विकास तो होता ही है, परंतु वह कार्य भी समाज-सेवा का है, ऐसा मैं मानता हूँ। जब तक जीवन के ये दो टुकड़े एक नहीं होते, तब तक जीवन में खिचाव बना रहेगा। मेरा हर एक व्यक्तिगत कार्य सामाजिक होना चाहिए; मेरा हर एक सामाजिक कार्य व्यक्तिगत होना चाहिए। मेरे और समाज के बीच कोई दीवार नहीं होनी चाहिए। इसलिए व्यक्ति और समाज का विकास अलग रहता ही नहीं है। पर आजकल दोनों को अलग मानते हैं। दोनों का विरोध भी मान लेते हैं और दोनों का संतुलन करने की कोशिश भी करते हैं। हम कहते हैं कि जैसे संघर्ष गलत, वैसे संतुलन भी गलत है।

ग्रामदान में व्यक्तिगत मालकियत मिट जाती है, ग्रामदान में व्यक्तिगत मालकियत बढ़ती है ! ये दोनों बातें ग्रामदान में होती हैं ! ग्रामदान में मेरी कुछ भी जमीन नहीं है और सारी जमीन मेरी जमीन है ! आज मेरी पाँच एकड़ जमीन है, पर गाँव में कुल ५०० एकड़ जमीन है। ग्रामदान के बाद जैसे मेरी शून्य एकड़ जमीन है, वैसे ही ५०० एकड़ जमीन भी मेरी है। घर में माँ की सत्ता नहीं होती है, फिर भी माँ की ही घर में सारी सत्ता है। यही हालत बच्चों की है। छह महीने के छोटे बच्चे की घर में कोई सत्ता नहीं है, पर उसका सब कुछ अधिकार है। घर का बादशाह अगर कोई है, तो वह बालक है। दूसरे ढंग से देखा जाय, तो बच्चों की क्या हस्ती है ? कोई खाना देगा, तो खायेगा, नहीं तो क्या खायेगा ? एक बाजू से उसकी कुछ भी सत्ता का न होना और दूसरी बाजू से सारी सत्ता का होना, ऐसी दोनों बातें घर में सध सकती हैं। आदर्श ग्रामदान के गाँव में ऐसा ही होना चाहिए। व्यक्ति और समाज का भेद इसमें मिट जायेगा। व्यक्ति के विकास के लिए जो कुछ किया जायेगा, उससे समाज का विकास होगा और समाज के विकास के लिए जो कुछ किया जायेगा, उससे व्यक्ति का विकास होगा। मैं सबको विद्या देता हूँ। उससे मेरी विद्या घटती नहीं है, बल्कि वह मजबूत, पक्की बनती है। विद्या के बारे में तो यह सब लोग मानते हैं, परंतु लक्ष्मी के बारे में लोग ऐसा नहीं समझते हैं। वे समझते हैं कि अपनी लक्ष्मी मैं किसीको देता हूँ, तो वह घट गयी ! परंतु अपनी विद्या मैं देता हूँ, तो वह घटती नहीं है। किसीको पैसा दे दिया, तो वह घट गया, ऐसा लगता है, परंतु वास्तव में किसीको पैसा देने से मेरा भी पैसा बढ़ा है, अगर मैं गाँव की सेवा में वह देता हूँ।

मैं बैंक में पैसा रखता हूँ, तो मेरा पैसा घटा या बढ़ा ? वैसे ही समाज-रूपी बैंक में हम अगर पैसा रखते हैं, तो क्या नुकसान है ? मामूली बैंक में तो कभी पैसे डूब सकते हैं, कभी-कभी दिवाला ही निकलता है, लेकिन यह समाज-रूपी बैंक में तो कभी दिवाला ही नहीं निकलता। आप सबकी सेवा में मैंने अपना सब कुछ लगा दिया, तो सेवा पाने का मेरा भाग्य क्या कम हो गया ? बल्कि मेरा सेवा पाने का भाग्य बढ़ गया। बाप तो बेटे को ही आज्ञा करता है, लेकिन मैं तो सबको आज्ञा करता हूँ। इस तरह जरूरत के मौके पर किसीकी भी सेवा माँग सकता हूँ, लेकिन बाप का बेटा मर गया, तो "बड़ा आधार चला गया," कह कर वह रोता है, क्योंकि उसने अकेले बेटे की सेवा की थी। इसलिए उसीसे सेवा पाने का उसका आधार था। वह मर गया, तो आधार भी टूट गया। परन्तु जिसने सारे समाज की सेवा की है, उसको कुल समाज से पाने का स्वाभाविक अधिकार हो जाता है।

ग्रामदान में डरने की कोई चीज ही नहीं है। सर्वोदय में जीवन के दो टुकड़े बनते ही नहीं हैं। व्यक्ति के विरुद्ध समाज खड़ा नहीं होता है; न समाज के विरुद्ध व्यक्ति। व्यक्तिगत जीवन के विरुद्ध सामाजिक जीवन और सामाजिक जीवन के विरुद्ध व्यक्तिगत जीवन खड़ा नहीं होता है, न सेवा और चिंतन के अलग-अलग दो टुकड़े होते हैं। सेवा ही चिंतन और चिंतन ही सेवा होती है।

मैं स्नान करने के लिए स्नान-घर में गया। लोग समझते हैं कि मुझे वहाँ एकांत प्राप्त हुआ। मैं आपके सामने बोल रहा हूँ, लोग समझते हैं कि मेरा एकांत खंडित हुआ। पर अब भी मेरा एकांत ही चल रहा है। अगर इस समय मैं एकांत महसूस नहीं करता हूँ, तो एकांत को मैं समझ नहीं सका हूँ।

कर्म का स्वरूप और परिणाम, दोनों कल्याणकारक होना चाहिए। फिर उस काम में रहने वाले मनुष्य को चिंतन के लिए स्वतंत्र समय निकालने की जरूरत ही नहीं, जैसे खेती में सेवा और चिंतन का विरोध नहीं रहता। बल्कि सेवा और चिंतन का विभाग भी नहीं रहता। उसी तरह सेवा में पूरा चिंतन, चिंतन में पूरी सेवा होनी चाहिए। व्यक्तिगत काम में सामाजिक काम पूरा हो जाता है और सामाजिक काम में व्यक्तिगत काम पूरा हो जाता है। एक घड़ा गंगा में रखा है, तो गंगा में घड़ा है और घड़े में भी गंगा है; ये दोनों बातें सही हैं। ऐसी खूबी सर्वोदय के कार्य में है। दूसरे कार्यों में यह खूबी नहीं है, इसलिए वहाँ झगड़े ही झगड़े हैं। लेकिन आज ऐसा विरोध पैदा किया गया, उस विरोध को एक रूप भी दिया गया और फिर अनेक 'संघ' भी बने। वह संघ नहीं, टुकड़े बन गये हैं। सारे समाज से जहाँ अलग पड़े, वहाँ संघ रहा कहाँ ? संघ का अर्थ है कि इकट्ठा करना, परंतु उसके तो टुकड़े पड़ गये ! दुनिया में आज अनेक प्रकार के संघ बनते हैं, जो सारे टुकड़े ही हैं। इस प्रकार का संघ या टुकड़ा सर्वोदय में नहीं बनता है। सर्वोदय-विचार में सब प्रकार का समन्वय, मेल होता है।

(पट्टुकोट्टै, तंजाऊर, ७-२-'५७)

सत्तावन आज पुकार रहा है !

फूट रही प्राची में देखो अरुण-करुण यह ज्वाला !
बजा रही दुन्दुभि मगन हो गगन-विहारी-निवाला !
कब आयेगी पुण्य घड़ी, जब तुम करवट ले जावोगे ?
कब आयेगी पुण्य घड़ी, जब क्रांति-गीत तुम गाओगे ?
सत्तावन की मर्म-भेदिनी वाणी तुम्हें पुकार रही है।
आज क्रांति की वेला में माँ धरती तुम्हें निहार रही है।
'सोने' की कीमत है महँगी, ओ तन्द्रा में सोने वालो !
मत बैठो इस पुण्य घड़ी में, ओ इतिहास बदलने वालो !
आज सूर्य के रथ पर चढ़ भगवान् तुम्हें ललकार रहा है !
सोई हुई जवानी को सत्तावन आज पुकार रहा है ! —दिगंबर झा

www.vinoba.in

बिहार के भू-वितरण-आन्दोलन के लिए कुछ सुझाव

(पारसनाथ शर्मा)

१५ फरवरी के "भूदान-यज्ञ" में श्री वैद्यनाथ बाबू का एक लेख, बिहार के भू-वितरण के संबन्ध में छपा है। योजना सुन्दर है और उसे सफल बनाने में हम सबका पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा। अपने अनुभवों के आधार पर कुछ सुझाव मैं भी यहाँ पेश करना चाहता हूँ।

(१) इसमें संदेह नहीं कि बिहार के गाँव-गाँव में भूमि-वितरण के लिए सहयोगी मिल जायेंगे, किन्तु यदि यह जानकारी नहीं मिली कि उनके गाँवों में किन्होंने कितनी जमीन दी है, तो सहयोग देने की इच्छा रखने वाले लोग अंधकार में रहेंगे और वितरण-आंदोलन की सफलता में संदेह हो जायगा। रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता अथवा अन्य लोग, जो बाहर से भूमि वितरण करवाने के उद्देश्य से गाँवों में जायेंगे, वे भी सूची के अभाव में कुछ नहीं कर सकेंगे। अतः मेरा सुझाव है कि हर गाँव में मिली जमीन की सूची तुरंत तैयार कर ली जाय। सूची के बँटवारे में भी देर हो सकती है। इसलिए काफी पहले सूची का तैयार होना अत्यन्त आवश्यक हैं। सूचियों की तीन प्रतियाँ विवरण के साथ तैयार की जानी चाहिए।

संभवतः बिहार भूदान-कमिटी ने सारे दान-पत्रों को संभाल लिया है। पर उनके पास अभी इतने कर्मचारी नहीं कि सारी सूचियों को इतनी जल्दी में वे तैयार कर सकें। अतः इसका भी विचार करना होगा।

(२) श्री चौधरीजी के लेख में जिन-जिन सहयोगी संस्थाओं का जिक्र किया गया है, वे जितने कार्यकर्ता दे सकती हैं, कम से कम एक माह के लिए उन्हें दे दें। १-२ दिन से काम सधने वाला नहीं। पंचायत-परिषद का भी सरकुलर निकला है, पर यदि पंचायतों के पीछे लगने वाले कार्यकर्ता न हों, तो सरकुलर से लाभ नहीं उठाया जा सकेगा। जितने गाँवों में जमीन मिली है, उन सबमें वितरण-प्रतिनिधियों की खोज कर उनसे निकट संपर्क स्थापित करना जरूरी है। इसके लिए कम से कम एक माह पहले संस्थाओं तथा भूदान के कार्यकर्ता सबडिवीजनों में, थानों में और सर्किलों में पहुँच जायँ। एकाध आदमी को हर सबडिवीजन में बैठना होगा, जो ऐसे सभी लोगों से पत्र-व्यवहार द्वारा संपर्क रखेगा, जो गाँवों में वितरण संपन्न कराने की जिम्मेदारी लेते हों। जो कार्यकर्ता सबडिवीज़नों में रहेंगे, वे वितरण-संबन्धी सूचनाएँ ग्रामीण प्रतिनिधियों तक पहुँचाया करेंगे, उनके शिक्षण आदि की भी व्यवस्था करेंगे और संस्थाओं से जो कार्यकर्ता आयेंगे, उन्हें भी काम में लगायेंगे।

(३) शिक्षण-शिविर तो हर सर्किल में होना चाहिए। सबडिवीज़न भर के ग्रामीण प्रतिनिधियों की संख्या कहीं-कहीं ५००-६०० हो सकती है। एक जगह जमा होकर इतने लोगों का शिक्षण लेना संभव नहीं है। बहुत लोग दूर होने के कारण आयेंगे ही नहीं। पर उसका आयोजन तो होना ही चाहिए, वह इसी दृष्टि से हो कि उसमें ऐसे कार्यकर्ताओं को शिक्षण देना है, जो सर्किलों में जाकर ग्रामीण सहयोगियों को आवश्यक जानकारी दे सकें।

(४) जन-आधारित कार्य में प्रचार की सबसे बड़ी आवश्यकता होती है। व्यक्तिगत अपील से ही काम नहीं चलेगा। वास्तविकता तो यह है कि ७१००० गाँवों में शायद ६९००० ऐसे होंगे, जहाँ समाचार-पत्र पहुँचते ही नहीं। फिर उन गाँवों के लोग तो अपील भी नहीं सुन पायेंगे!

अतः इतना बड़ा काम इतने थोड़े समय में सफल हो, इसके लिए लाखों नोटिसें बँटनी चाहिए, हजारों सभाएँ होनी चाहिए और लाउड स्पीकर द्वारा हर गाँव के सामने खड़े हो कर प्रचार करके कोने-कोने में आवाज़ पहुँचा देनी चाहिए, ताकि सारे प्रान्त की हवा में भूदान-वितरण और १८ अप्रैल की बात गूँज जाय। हर बिहारवासी की जबान पर '१८ अप्रैल' हो, ऐसा आयोजन होना चाहिए। रेल-गाड़ियों पर, बसों में, होटलों में, हर जगह यही बात चलने लगे। जन-आधारित वितरण के लिए यह ज़रूरी है।

इसमें खर्च का सवाल उठता है। जिस काम को करना है, उसे पूरा करने के लिए जितने खर्च की आवश्यकता हो सकती है, उतना जरूर किया जाय। हम वहाँ संकोच न करें। पर इतना खर्च आये कहाँ से? गांधी-स्मारक-निधि से पैसा लेना हम बन्द कर चुके हैं। भूदान-क्रांति के लिए यह वरदान है। अब दो बातें हो सकती हैं : यदि बिहार भूदान-समिति भू-वितरण को अपना काम समझती है, तो वह खर्च का प्रबन्ध अपने ढंग से करे। पर यदि वह नहीं कर सकती है, तो बिहार की जनता इस महान् काम में कभी पीछे नहीं रहेगी, केवल उसके पास पहुँचने भर की देर है, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

(५) अब एक बात नम्रतापूर्वक कहना चाहूँगा। श्री चौधरीजी ने लिखा है कि रेवेन्यू-डिपार्टमेंट की मदद वितरण में ली जाय। मैं जहाँ तक समझता हूँ, कि रेवेन्यू-डिपार्टमेंट वाले इस काम का भार शायद ही उठाना स्वीकार करें। उनके पास यों ही इतने काम पड़े हैं कि जो थोड़ी-बहुत गैरमजरूआ जमीन उनके पास है, उसे भी वे इतने दिनों में नहीं बाँट सके। दूसरी बात यह है कि ऊपर के अफसर तो गाँवों में जाते नहीं। काम का भार छोटे कर्मचारियों पर ही आता है! फिर सबसे अधिक खतरनाक बात यह है कि उनकी मदद माँगने से हर बात में सरकार पर निर्भर रहने की वृत्ति हममें बढ़ेगी। भूमि-प्राप्ति और वितरण भू-क्रांति के ऐसे अंग हैं, जिनको यदि सरकार का स्पर्श हो, तो क्रांति का सारा शरीर ही जल जायगा। निर्माण में हम सरकार की मदद लें, तो कोई हर्ज नहीं। वह तो सरकार का ही काम है। पर क्रांति में सरकार की मदद लेना भूल है!

गलतफ़हमी न हो, इसके लिए यह साफ कर देना उचित होगा कि यदि सरकार में काम करने वाले लोग, चाहे वे मिनिस्टर (मंत्री) हों या कर्मचारी, भारतीय नागरिक होने के नाते स्वेच्छा से हमें प्राप्ति या वितरण में मदद दें, तो उनका सहयोग सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। मेरा जो कहना है, वह यह कि उनकी डिपार्टमेंटल मदद नहीं लेनी चाहिए।

× × ×

श्री पारस बाबू ने किसी सरकारी मुहक्मे से मदद लेने के बारे में जो एतराज पेश किया है, उसका मतलब हमें इतना ही समझना चाहिए कि क्रांतिकारी को लोकशक्ति के सहारे काम करना है। लेकिन हमको यह भी बिल्कुल साफ़ तौर पर समझ लेना चाहिए कि लोकशक्ति का आंदोलन सत्ता के बहिष्कार का आंदोलन नहीं है। जिस तरह हम गैर-सरकारी संस्था और संगठनों से बिना संकोच मदद लेते हैं, उसी तरह सरकारी विभागों से भी मदद लेने में हर्ज नहीं है। शर्त इतनी ही है कि कार्यकर्ता आंदोलन की इज्जत और आज़ादी संभालें। संपत्तिदान में हम संपत्तिवानों की सहायता लेते हैं, लेकिन उनके आश्रित नहीं बनते। उसी तरह जिन लोगों के हाथ में सत्ता है, उनकी सहायता हम उनकी व्यक्तिगत और सार्वजनिक, दोनों हैसियतों से लेंगे, लेकिन हुकूमत के मँहताज नहीं बनेंगे। हमारे कार्यकर्ताओं में लोकशक्ति जाग्रत करने की ताक़त और हिमत जितनी बढ़ेगी, उतनी सत्ता और संपत्ति की मदद लेने पर भी, अपनी आज़ादी और इज्जत संभालने की उनकी कुशलता भी बढ़ेगी।

काशी, २१-२-'५७ —दादा धर्माधिकारी

विदेशियों की दृष्टि में भूदान

मैंने अपना अधिकांश समय विदेश में व्यतीत किया है। मैंने स्पेन के गृह-युद्ध में भी भाग लिया है। हिटलर के समय मैं जर्मनी में था और मैंने हिटलर की व्यवस्था को निकट से भी गिरते देखा, परन्तु मुझे गांधीजी के विचारों से जो प्रेरणा मिली थी, वह कम नहीं हुई, बढ़ते ही गयी। उनसे मेरी प्रथम भेंट लन्दन में राउन्ड-टेबिल-कान्फ्रेंस के समय हुई और उसी समय से मेरे ऊपर उनका जो प्रभाव पड़ा, वह दूर न हो सका।

मैं १६ वर्षों से भारत में हूँ और मैंने भारत के ग्रामीणों में जो उदासीनता देखी, वह मेरे हृदय में घर कर गयी। मैंने होशंगाबाद जिले (मध्यप्रदेश) में कार्य किया है, परन्तु मुझे लोगों में उत्साह दिखायी नहीं दिया। एक दिन अचानक मुझे श्री विनोबाजी के बारे में पता लगा और मैं उनके पास गया। उनके साथ घूमने से ही पता लग गया कि इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीणों में जो उत्साह है, वह अपूर्व है। मुझे विदेशों से मित्रों के पत्र आते हैं, जिनमें भूदान-यज्ञ के बारे में और अधिक जानने की जिज्ञासा रहती है। आज अन्य सारे देश इस नये प्रयोग के प्रति जागरूक हैं और उसकी सफलता पर भारी आशा लगाये बैठे हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि साम्यवाद के विरुद्ध यदि और कोई वाद ठहर सकता है, तो वह भूदान-आंदोलन ही है। —डोनाल्ड ग्रूम

मैं अमेरिका में भी भूदान-कार्य और संत विनोबाजी के विषय में सुनता था। आज उसे प्रत्यक्ष देखने का सौभाग्य मिला। मेरे खयाल से यह काम, भारत में जितने सृजनात्मक कार्य चल रहे हैं, उनमें सबसे बड़ा काम है। इसमें आध्यात्मिकता है। इस कार्य से हिंदुस्तान ही नहीं, बल्कि दुनिया के देशों को भी अहिंसा के मार्ग पर उन्नति करने का मौका मिलेगा, दुनिया में शांति और प्रेम की स्थापना होगी। भूदान बाइबिल-समर्थित है। —चर्च-सुप्रिन्टेंडेंट

(भूदान-शिविर, बैहर के भाषण से)

www.vinoba.in

विनोबा के साथ श्रीमती चेस्टर बौल्स : २.

(दामोदरदास मदड़ा)

श्रीमती बौल्स ने विनोबा को यह बतलाया कि नीग्रो नेता श्री किंग, जिन्होंने अमेरिकन बसों में यात्रा करने का नीग्रो लोगों का अधिकार सिद्ध करने के लिए सफल आंदोलन किया था और इस तरह जिन्होंने अमेरिका में वर्ण-प्रपंच का विरोध किया था, वे भारत में विनोबा से मिलने आने वाले हैं और पदयात्रा में शामिल होने वाले हैं। श्री हेरिस ने कहा, "एक वकील के नाते मुझे यह कबूल करना चाहिए कि उस आंदोलन का समर्थन गिरजाघरों में उपदेश करने वाले धर्माध्यक्षों ने किया, न कि न्यायालयों में पेशा करने वाले वकीलों ने।"

विनोबा ने कहा, "यह बहुत अच्छी खबर है।"

श्रीमती बौल्स ने उत्साह के साथ कहा, "यह प्रकाश की पहली रेखा है! इसके पहले अमेरिका में ऐसा कभी नहीं हुआ था। अब तो वे लोग बसों का उपयोग करते हैं और इस बुनियाद पर करते हैं कि रंग की कोई तमीज़ नहीं होनी चाहिए।"

श्रीमती बौल्स ने यह जानना चाहा कि दुनिया भर में जगह-जगह प्रकट होने वाली ये चिनगारियाँ क्या इकट्ठी की जा सकती हैं? और किस तरह इकट्ठी की जा सकती हैं? विनोबा ने आश्वासन दिलाया, "यह काम ईश्वर आप जैसे व्यक्तियों से करायेगा। यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ, चारों तरफ शुभ संवाद फैलाना आपका एक जीवन-कार्य होगा।"

इसके बाद अतिथियों ने यह जानना चाहा कि "भूदान में शामिल होने से पढ़े-लिखे लोग क्यों हिचकिचाते हैं?" श्रीमती बौल्स ने कहा—"यह एक अनोखी बात है कि इस प्रचंड जागृति से फायदा उठाने की सिफत बुद्धिमान-वर्ग में न हो, लेकिन बच्चे उन्हें रास्ता बतलायेंगे।"

श्रीमती बौल्स प्रार्थना-सभा की घटना का उल्लेख कर रही थीं। विनोबा ने जब बच्चों से पूछा कि ग्रामदान के बारे में तुम्हारी क्या राय है, तो सारे के सारे बच्चों ने ग्रामदान के हक़ में अपने हाथ उठाये थे। श्रीमती बौल्स जब पहुँचीं, तो प्रार्थना-सभा हो रही थी और विनोबा से मिलने के पहले वे उसमें शामिल हुई थीं। प्रार्थना के आरंभ में पाँच मिनिट का मौन रहता है। उस वक्त बच्चों को भी बिलकुल शांत देख कर वे बहुत प्रभावित हुईं।

अपने देश की और दूसरे देशों की परिस्थिति का उल्लेख करते हुए श्रीमती बौल्स कहने लगीं, "वहाँ तो लोग उन्हीं नेताओं के पीछे जाते हैं, जो केवल भाषण-प्रवीण होते हैं। परंतु भूदान ने राजनैतिक जीवन में एक नया परिमाण उपस्थित किया है।" फिर से अमेरिका के नीग्रो-आंदोलन का जिक्र करते हुए श्रीमती बौल्स ने पूछा, "आज के भारतीय लोकराज्य में आप इस तरह के सत्याग्रह का स्थान क्या मानते हैं?"

विनोबा : "वह पुरानी पद्धति का सत्याग्रह, जिसका प्रयोग हम गांधीजी के ज़माने में करते थे, कुछ निषेधात्मक ही था। उन्होंने ब्रिटिश लोगों से कहा—'भारत छोड़ो।' उस परिस्थिति में यह स्वाभाविक ही था; लेकिन आज स्वराज्य के बाद, जब कि लोकशाही के नाम से एक राज्यव्यवस्था काम कर रही है, सत्याग्रह भाव-रूप और विधायक होना चाहिए। मुझे आशा है कि ग्रामदान इस प्रकार के सत्याग्रह का रास्ता दिखायेगा। धीरे-धीरे लोग हृदय-परिवर्तन और बलप्रयोग का भेद समझेंगे और जल्द ही महसूस करेंगे कि बलप्रयोग की कोई जरूरत नहीं है। लोकतांत्रिक देश में सत्याग्रह एक विधायक और उन्नतिकारक शक्ति होनी चाहिए। 'सुधारो या खतम करो,' यह हम नहीं कह सकते। हमको तो सिर्फ दुरुस्त ही करना होगा। खतम करने का सवाल ही नहीं हो सकता। पुराना अनुभव हमें है। उसमें से विधायक सत्याग्रह की नयी पद्धति प्रकट होगी। हमारे निषेधात्मक सत्याग्रह से हमें स्वतंत्रता प्राप्त हो सकी। लेकिन उस सत्याग्रह से भावरूप और प्रभावशाली अहिंसक शक्ति उत्पन्न नहीं हो सकी। लोग अब तक यह महसूस नहीं करते कि प्रेम जैसी कोई भावरूप शक्ति है, जिसके सामने सब तरह की बुराइयाँ पिघल जाती हैं। इस तरह की निष्ठा की कमी है। हमको इस तरह की श्रद्धा और प्रेम तथा अहिंसा की अमोघ शक्ति में निष्ठा विकसित करनी चाहिए।"

श्रीमती बौल्स ने इस सत्याग्रह के स्वरूप के बारे में और कुछ स्पष्टीकरण चाहा। विनोबा ने कहा : "किसी अन्यायी क़ानून के विरोध में हमारा क़दम निषेधात्मक नहीं होना चाहिए। याने उसमें प्रेम का अभाव नहीं होना चाहिए। क्रिया की प्रेरक शक्ति विधायक प्रेम ही हो। 'मैं आपसे द्वेष नहीं करता,' इतना कहना काफी नहीं है। आपके दोषों के बावजूद मुझे आपसे प्रेम करना चाहिए, क्योंकि मैं भी तो निर्दोष नहीं हूँ। आपको प्यार करने के लिए मुझे हमेशा तैयार रहना चाहिए। उसमें से एक विधायक शक्ति पैदा होगी। यह शक्ति हरएक के हृदय में है। केवल उसे प्रकट करना है। अनादि काल से हमने अपना सारा समय, सारी शक्ति और सारे साधन हिंसक शक्ति के विकास में लगाये हैं। अहिंसा के विकास के लिए उतना भी समय नहीं लगेगा।"

"ये नये-नये आविष्कार जिन वैज्ञानिकों ने किये हैं, वे उन आविष्कारों का दुरुपयोग कैसे रोक सकते हैं?"

इस पर उन्हें तुरंत उत्तर मिला, "अहिंसा के लिए उनके आविष्कारों का उपयोग जब होता है, तो वे उसका प्रतिकार अहिंसक रीति से अवश्य कर सकते हैं।"

बाद का सवाल था—"भूदान में भूमिहीनों का कौनसा सक्रिय भाग रहेगा?"

"भूमिहीनों को यह पहचान लेना चाहिए कि उनकी काम करने की ताक़त दुनिया में सबसे बड़ी ताक़त है। इसलिए उनको श्रमदान करने के लिए आगे बढ़ना चाहिए। इस तरह वे एक नैतिक बल पैदा करेंगे। उनको यह नहीं समझना चाहिए कि उनके लिए पाना ही पाना है। उनमें भी देने की सामर्थ्य है। उन्हें श्रम के रूप में दान करना चाहिए—और वह भी प्रेम से।"

अंत में श्रीमती बौल्स ने जानना चाहा कि "क्या आंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भूमिदान का विचार राष्ट्रसंघ की मार्फत दुनिया में प्रचलित हो सकता है?"

विनोबा ने कहा, "मैं चाहता तो हूँ कि ऐसा होता! परंतु मौजूदा राष्ट्रसंघ के विषय में मैं बहुत आशावादी नहीं हूँ। वे एक मेज़ के इर्दगिर्द बैठते तो हैं, लेकिन एक-दूसरे का भरोसा नहीं करते। एक-दूसरे के बारे में संशय रख कर मिलते हैं।"

अंत में विनोबा ने फिर श्रीमती बौल्स को धन्यवाद दिये। जवाब में श्रीमती बौल्स ने कहा, "आपको अंग्रेजी बोलते हुए सुनना मन को बहुत भाता है।

करियापटनम्, तंजाऊर, २-२-'५७ (समाप्त)

(मूल अंग्रेजी)

आत्मशक्ति का आवाहन

(एस० वी० गोविंदन्)

पळनी का तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति का निर्णय इस क्रांति का एक महान् प्रयोग है। सब जानते हैं कि फल की इच्छा न रखते हुए निःस्वार्थ-भाव से निष्काम और अपरिग्रही बन कर सत्य के आधार से अहिंसा की छाया में रात-दिनों कष्ट झेलने में ही आनंद मानने वाले कार्यकर्ताओं की अटल श्रद्धा और उत्साह से ही यह आंदोलन सफल हो सकेगा।

आज का आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र असमानता, अनीति और ऊँच-नीच भाव से भरा हुआ एक घने जंगल के समान है। सुसंस्कृत मानवता अगर प्रबल हो, तो ऐसी विषमता उपस्थित ही न होती। उसीकी स्थापना इस आंदोलन का उद्देश्य है, जो गाँव-गाँव, घर-घर भूदान-संदेश के रूप में पहुँचाना है।

इस आंदोलन में काल-निर्णय का बड़ा महत्त्व है। न्यायार्थी को न्याय तत्क्षण मिलना चाहिए। ठीक समय पर न्याय नहीं मिला, तो अच्छा परिणाम नहीं निकलता। रोगी से अगर हम यह कहें कि आठ-दस साल के बाद हम तुम्हारे उपचार का ठीक इंतजाम कर देंगे, तो क्या रोगी बचेगा? जो व्यक्ति तीन-चार दिन से कुछ खाया नहीं, उससे अगर हम यह कहें कि एक साल के बाद तुम्हें भर-पेट खिलाने का इंतजाम हम कर देंगे, तो क्या उसकी भूख मिट जायगी? रोगी का उपचार तुरंत होना चाहिए, भूखे को तुरंत खिलाना चाहिए। उसी प्रकार शीघ्रातिशीघ्र इस भूसमस्या का हल करना भी लाजिमी है।

अतः आर्थिक व सामाजिक क्षेत्रों में एक मौलिक परिवर्तन की सख्त जरूरत है। इसीलिए आज की हालत देखते हुए यह परिवर्तन हमें एक साल के अंदर भूक्रांति द्वारा लाने की कोशिश करनी है। वेतन और यात्रा-खर्च की अपेक्षा में बैठे रहने वाले कार्यकर्ताओं से कभी भी क्रांति नहीं हो सकती, यह देख कर ही शायद पूज्य विनोबाजी ने इस आंदोलन को सर्वजनावलंबी बनाया है। मनुष्य-हृदय में जो आत्मीय शक्ति है, उसके आधार पर यह आंदोलन सफल ही होगा और क्रांति होगी।

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१ मार्च सन् १९५७

प्रयोग-शाला की सीद्धी के बाद–

(वीनोबा)

जब करुणा के रूप में भक्ती प्रकाशीत होगी, तभी वह वास्तवीक भक्ती होगी। मैंने ऐसे मूर्तीपूजक देखे हैं, जो बीलकुल कठोर-हृदय हैं! रोज़ पूजा-अर्चा करते हैं, परंतु जीवन में उतने ही कंजूस और नीर्दय बने रहते हैं! शास्त्र में लीखा है की हम जैसा ध्यान करते हैं, वैसा ही रूप हमको मीलता है! कभी-कभी तो मुझे लगता है की पत्थर की मूर्ती का ध्यान करने वाले पत्थर का ध्यान करते–करते पत्थर के समान ही कठोर बन जाते होंगे! ईसके फल-स्वरूप ही लोग नास्तीक बनते हैं। दोष तो मैं उनको देता हूं, जो पत्थर की पूजा करते हैं और खुद भी पत्थर बन जाते हैं! मैं यह नहीं कहता की मूर्ती की पूजा करना गलत है। वह भी ईश्वर की भक्ती का एक प्रकार है। परंतु सच्ची उपासना का रूप यही है की हृदय में करुणा भरी हो और सारे ईश्वर-रूप हैं, ऐसी पहचान हो। परमेश्वर याने क्या? परमेश्वर याने प्रेम। भक्तों ने तो यह भी कहने का बाकी नहीं रखा की "चींतये कोवील–हृदय ही मंदीर है।"

'जो मंदीरों में जायेगा, वही भक्त कहलायेगा,' ऐसी बात नहीं है; बल्की ईन मंदीरों में जो भक्ती हुई, उसको हम प्रयोग-शाला का प्रयोग समझते हैं। वहां वह सफल होता है, तो उसको सारे समाज में 'अप्लीकेशन' (लागू) करना पड़ता है। वीज्ञान की प्रगती ईसी तरह हुई है। ईन मंदीरों में भी ईसी तरह भक्ती के कुछ प्रयोग हुए। वह लेबोरेटरी ही थी। लेकीन प्रयोग-शाला के प्रयोग अगर प्रयोग-शाला में ही रह जायेंगे, तो समाज को उनका क्या उपयोग होगा? ईसलीए जो भक्ती के प्रयोग अब तक हुए, वे अब समाज में भी फैलने चाहीए। व्यक्तीगत मोक्ष के प्रयोग को हम गलत प्रयोग नहीं समझते हैं; क्योंकी प्रथम व्यक्तीगत क्षेत्र में प्रयोग करके उसके बाद ही समाज में वे लागू हो सकते हैं।

अगर कोई आकर हमें कहे की समाधी, भक्ती और अहींसा; ये सबके लीए नहीं हो सकती। वे एकाध मनुष्य के लीए हो सकती हैं, तो हम कहेंगे की वे चीजें फीर हमारे काम की ही नहीं हैं! हवा, पानी और सूरज की रोशनी सबके लीए हैं, तो क्या समाधी, अहींसा और भक्ती भी सबके लीए नहीं हैं? समाज को उनकी ज़रूरत है ही। और हर कीसीके लीए ये चीज़ें हैं, ईसलीए उनकी ईतनी कीमत भी है!

(आवुडैयार कोवील, तंजावूर, १२-२)

पराक्रम का आवाहन

(धीरेंद्र मजूमदार)

हम प्रायः सुनते हैं कि हमारा देश बड़ी तरक्की कर रहा है। पर हमारे पुरखे जिस तरह का स्वस्थ और पुष्टिकारक भोजन करते थे, जिस परिमाण में चिन्ता से मुक्त रहते थे, उनके वंशज हम, आज वैसे नहीं रह पा रहे हैं। पर घर में बैठे-बैठे एक-मात्र तकदीर को कोसने से भी काम नहीं चलेगा। देश की मालिक देश की जनता है। जिस तरह देश की उन्नति के लिए सभी सदस्य मिल कर सोचते हैं, उसी तरह देश के सभी लोगों को देश की हालत सुधारने की बात सोचनी है। अब हमारा देश अंग्रेजों से मुक्त है। आक्रमकों के जाते-जाते जो अस्तव्यस्तता आती है, जो नुकसान होता है, उसे सब मिल कर दूर करना है। प्राचीन काल में, जब कि हम अपना प्रबन्ध स्वयं नहीं करने लगे, तो 'राजा' हमारे समक्ष आया और उसने हमारा प्रबन्ध किया। पर वही राजा प्रजा पर अत्याचार करने लगा, तब समाज ने राजा को हटाया। फिर पूंजीवाद आया। पूंजीपति भी समाज का शोषण करने लगे। तब उसका भी बहिष्कार हुआ और फिर एक ओर साम्यवाद तथा दूसरी ओर श्री शाही के रूप में 'मैनेजरवाद' का उदय हुआ। यही 'लोकतंत्र' का सुंदर-सा नाम लेकर भ्रम पैदा कर रहा है।

हमारे देश मेंअंग्रेजों ने ही पूंजीवाद और मैनेजरवाद को जन्म दिया! अंग्रेज भारत का शोषण करके पेट भरते थे। दो तरह से उन्होंने भारत का शोषण किया है। उन्होंने अपने यहाँ के चमकीले कपड़े यहाँ बेचना प्रारम्भ किया और यहाँ की सम्पत्ति का स्वर्ण लूटना शुरू किया। विदेशी चीजों के खरीदने में जब हमारा सोना समाप्त हुआ, तब हमने अनाज़ देना शुरू किया। इस तरह सोना, अनाज और गो-वंश का अपहरण हुआ।

शोषण का क्रम

शोषण का दूसरा रास्ता यह हुआ कि जहाँ गाँव का प्रबन्ध गाँव के बड़े-बूढ़े करते थे, वहाँ अंग्रेजों ने कहा कि बड़े लोग कैसे काम करेंगे? हमें नौकर रखिये, काम हो जायगा! इससे नौकर बहुत हो गये और उन्हें बड़ी-बड़ी तनख्वाह मिलना प्रारम्भ हुआ। बिल्ली का इन्तजाम जिस तरह बन्दर करता था, उसी तरह सब हड़प कर ऐसा माकूल इन्तजाम किया गया कि आज देश दर-दर का भिखारी बन रहा है! आज जो मालिक है, वही नौकर को सलाम करता है। उनकी इच्छाओं का मुहताज रहता है। महात्मा गांधी ने कहा था कि नौकरशाही से भी असहयोग करो और गाँव में ग्रामराज कायम करो।

शहर दिन-दूने रात-चौगुने उन्नति कर रहे हैं, संपत्ति वहाँ इकट्ठी हो रही है; इसलिए गाँव की हालत खराब होती जा रही है। शासन इंग्लैंड से सिर्फ दिल्ली आ गया है। गोरे के स्थान पर काले आये। इस तरह स्वराज्य यानी ग्रामराज्य कायम नहीं हो सकेगा। दिल्ली से शासन को गाँव में लाना होगा और इसके लिए हमें किसी अधिकार की आवश्यकता नहीं है। न कोई कानूनी अधिकार हमारे नेताओं के पास था। राजेन्द्र बाबू को बिहार के भूकम्प में सेवा करने के लिए किसी कानून ने नहीं कहा, फिर भी उन्होंने स्वेच्छया वह काम किया। अगर नौकरशाही और पूंजीवाद कायम रहा, तो जवाहर या जयप्रकाश क्या, ब्रह्मा भी खाना-कपड़ा पूरा नहीं कर सकेंगे, क्योंकि पद्धति वही है। जिसका दिल खेत पर है, उसका हाथ और पैर खेत की मेड़ पर रहता है और जिसका हाथ-पैर खेत में काम करता है, उसका दिल घर पर रहता है। इससे उसका उत्पादन कैसे बढ़ेगा? दिल और हाथ-पैर, दोनों खेत के अंदर हों, तभी देश की स्थिति सुधरेगी, अन्यथा पंचवर्षीय क्या, हजारवर्षीय योजनाएँ भी हमारी समस्या का निदान नहीं कर पायेंगी। यानी जिसके हाथ-पैर काम करते हैं, उसे जमीन देनी होगी और जो मेड़ पर काम करते हैं, उन्हें जमीन देनी पड़ेगी। जिस तरह परती जमीन को जोतना आवश्यक है, उसी तरह 'परते' आदमी को भी जोतना होगा! 'परते' आदमी को जोतने के लिए खादीग्राम जैसे कारखानें खोल रखे हैं।

आज जितने भूमिहीन मजदूर हैं, उन्हें जमीन देनी है। जमाने की जिसे पहचान है, वे अवश्य ही जमीन देंगे। सन् '५७ में विनोबा ने देश को आह्वान किया है कि इस साल की क्रांति यह हो कि कोई भूमिहीन न रहने पाये, गाँव की शक्ति गाँव में ही संचित रहे। हमें भूमि का ग्रामीकरण करना होगा। भूमि का मालिक कोई नहीं होगा, तो समूचे गाँव की ही मुक्ति होगी। •

• ग्रामराज-संमेलन, संग्रामपुर (मुंगेर) में दिये भाषण से।

www.vinoba.in

नयी तालीम के समस्त सेवकों से—

१८ जनवरी, १९५७ को हरिजन-कॉलनी, देहली में आचार्य काकासाहब कालेलकर की अध्यक्षता में हिंदुस्तानी तालीमी-संघ की बैठक हुई। इस बैठक में विचार और निर्णय के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह रहा कि हिन्दुस्तानी तालीमी-संघ का भावी कार्यक्रम क्या हो और विशेष करके भूदान-यज्ञ-मूलक इस महान् अहिंसक क्रांन्ति की चुनौती का नयी तालीम के सब कार्यकर्ता और विद्यार्थी क्या जवाब दें?

इस विषय की प्रस्तावना करते हुए श्री आर्यनायकम्‌जी ने नयी तालीम के पिछले अठारह वर्षों के इतिहास का एक संक्षिप्त विवरण दिया। उन्होंने कहा :

"अब तक हमने पुरानी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में नयी तालीम का जो काम किया, वह एक समझौते का काम रहा है, एक अधूरे शिक्षाक्रम का असम्पूर्ण प्रयोग रहा है। अभी हमें नयी तालीम का असल काम, याने अहिंसक समाज-रचना का काम करना है। अब तक इस काम के लिए अनुकूल परिस्थिति नहीं थी, लेकिन आज पूज्य विनोबाजी के भूदानयज्ञमूलक सामजिक क्रांति ने ग्रामदान का जो रूप लिया है, इस ऐतिहासिक परिस्थिति में ग्रामदानी गाँवों में नयी तालीम का सच्चा काम करने का समय आ गया है। अब सिर्फ बुनियादी शाला का मकान और आहाता नयी तालीम का क्षेत्र नहीं रहेगा, सारा गाँव ही नयी तालीम का विद्यालय बन जायेगा। गाँव के सब कुशल किसान और कारीगर नयी तालीम के शिक्षक होंगे और बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सब ग्रामवासी नयी तालीम के विद्यार्थी होंगे। तब बापूजी का यह सूत्र सार्थक होगा–'अब नयी तालीम का क्षेत्र सात से चौदह साल के बालक नहीं है; लेकिन माँ के पेट में पैदा होते हैं, तब से लेकर मरने तक नयी तालीम का क्षेत्र है।'

"जब-जब हम किसी गाँव या शहर में नयी तालीम की शाला खोलने की बात सोचते हैं, तो तुरन्त हमारे सामने प्रश्न खड़ा होता है कि शाला के लिए मकान, खेती के लिए जमीन और उद्योग के लिए साधन कहाँ से मिलेंगे? ग्रामदान से तो सारा गाँव 'एक परिवार' हो गया। सारी जमीन गाँव की जमीन हो गयी। तब बुनियादी शाला के लिए अलग मकान की या अलग जमीन की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। जहाँ-जहाँ खेती का काम चलेगा, गाँव के सब बच्चे और नयी तालीम के शिक्षक वहाँ काम करेंगे, गाँव के अच्छे किसान उनका मार्गदर्शन करेंगे और वहीं नयी तालीम की खेती होगी। गाँव में सबके लिए वस्त्र-स्वावलम्बन का काम चलेगा। घर-घर में चरखे चलेंगे, करघे चलेंगे। गाँव के कुशल बुनकर बुनाई सिखायेंगे। गाँव के बढ़ई के पास बच्चे बढ़ईगिरी सीखेंगे। लोहार के पास लोहारी सीखेंगे। कुम्हार के पास मिट्टी का काम सीखेंगे। शिक्षक का काम सिर्फ यही रहेगा कि इन उद्योगों के साथ ज्ञान का संबंध जोड़ दे। इस तरह विनोबाजी की "एक घंटे की शाला" का काम चलेगा। गाँव में सुबह-शाम की प्रार्थना होगी। अच्छे धर्मग्रंथों का वाचन होगा। गाँव की भजन-मंडली से बच्चे भजन सीखेंगे। स्कूल में अलग-अलग संगीत-शिक्षक की आवश्यकता नहीं होगी। इस तरह गाँव को स्कूल मान कर और गाँव की सब प्रवृत्तियों को शिक्षा-प्रवृत्ति मान कर जब काम होगा, तब नयी तालीम का सच्चा काम होगा। अब उसके लिए समय आ गया है। इस ऐतिहासिक मुहूर्त को हमें पहचान लेना चाहिए।

"इसलिए मैंने कहा कि अब नयी तालीम का दूसरा अध्याय शुरू हो रहा है। वह है, नयी तालीम के द्वारा नये समाज की रचना का अध्याय। इसलिए अब हमें ग्रामदानी गाँवों में ग्रामराज्य-रचना का काम हाथ में लेना होगा और मेरी राय में यही अब नयी तालीम का आगे का कार्यक्रम होना चाहिए।"

श्री आर्यनायकम्‌जी के इस प्रस्ताव पर बहुत गहराई से विचार हुआ और एकमत से नीचे लिखा प्रस्ताव स्वीकृत हुआ :

क्रांति का तक़ाज़ा

"पूज्य विनोबाजी के भूदान-कार्य ने अब जो ग्रामदान का रूप ले लिया है, उससे अहिंसात्मक समाज-क्रांति का काम प्रत्यक्ष रूप से अमल में लाने के दिन आ गये हैं। अहिंसात्मक क्रांति राज्य-सत्ता के द्वारा नहीं, किन्तु शिक्षा के द्वारा हो सकती है। इसलिए हिन्दुस्तानी तालीमी-संघ का कर्तव्य होता है कि इस क्रांति में यथासंभव सहयोग दे।

अहिंसा का आवाहन

"पूर्व-बुनियादी, बुनियादी और उत्तर-बुनियादी तक का अनुभव लेने के बाद और उसकी आवश्यकता राष्ट्र के सामने सिद्ध करने के बाद अब संघ का कर्तव्य है कि इस अहिंसक क्रांति में वह श्रद्धा के साथ प्रवेश करे। इसलिए हिन्दुस्तानी तालीमी-संघ का भारत भर के सब नयी तालीम के कार्यकर्ताओं से अनुरोध है कि इस भूदान-यज्ञ-मूलक अहिंसक सामाजिक क्रांति में इस कार्य का भार जहाँ-जहाँ सर्वोदय-मंडलों ने अपने हाथ में लिया है, उसके साथ पूरा-पूरा सहयोग दें।"

("नयी तालीम" से सादर)

जिला-सेवकों का लक्ष्य

(विनोबा)

जो लोग अपना सब कुछ छोड़ कर धर्म-कार्य के लिए ही अपना जीवन समर्पण करते हैं, उन पर यह जिम्मेवारी आती है कि समाज की धारणा किस तरह हो, उसकी राह वे दिखावें। धर्मकार्य करने की जिम्मेवारी उन सब पर है, जिनके हृदय में धर्म की भावना पड़ी है। साधारणतया सब गृहस्थों पर यह जिम्मेवारी है, परंतु लोगों को धर्म-कार्य पर ले जाने की विशेष जिम्मेवारी उन लोगों की मानी जायगी, जिनको भगवान् ने धर्म के लिए ही जीवन समर्पण करने की प्रेरणा दी हो।

भूदान-ग्रामदान-आंदोलन "धर्मचक्र-प्रवर्तन" का आंदोलन है। यह शब्द गौतम बुद्ध का है, लेकिन 'भगवद्‌गीता' में भी इसका जिक्र आता है। गीता ने उसको "यज्ञचक्र" नाम दिया है। 'जो इस यज्ञचक्र को नहीं चलायेगा, उसका जीवन पापमय बनेगा,' इसलिए हर शख्स का कर्तव्य है कि वह धर्मचक्र-यज्ञचक्र चलाने में अपना हिस्सा दे। आज हमको एक धार्मिक पुरुष (कुंडूकुडि अडिगलार) मिल गये हैं, जो ग्रामदान के काम में लग गये हैं। हमने उन पर एक ज़िला सौंप दिया और कहा कि उसे वे ग्रामदानी बनायें। हम चाहते हैं कि एक-एक जिले की जिम्मेवारी इसी तरह उठा ली जाय।

बहुत लोग पूछते हैं कि ऐसा कार्य एक शख्स कैसे करेगा? लेकिन हमारा उल्टा विश्वास है। हम समझते हैं कि धर्मकार्य अकेला पुरुष ही प्रारंभ करता है। ईसाई धर्मकी प्रेरणा अकेले एक ईसा मसीह के दिमाग में ही पैदा हुई और उनके शिष्यों के जरिये फिर योरप में फैली और अब तो वह चीज़ दुनिया भर में फैली है। उनके शिष्य सिर्फ बारह थे, उनमें से भी एक शिष्य काम नहीं कर सका। बाकी के लोगों ने ईसा के मरने के बाद काम किया। जब तक वे जिंदा थे, वे अकेले ही काम करते थे। महंमद पैगंबर के अकेले के हृदय में इस्लाम की ज्योति प्रकट हुई। ऐसी मिसालें आप बार-बार देखेंगे कि एक-एक शख्स ने देश का रंग ही बदल दिया।

कुल दुनिया को प्रकाशमान करना है, तो परमेश्वर ही वह करेगा। पर छोटा दीपक भी अपनी प्रकाश-सामर्थ्य से आसपास के अंधकार को मिटा देता है। वह स्वयं अंधकार पहचानता ही नहीं है। इसलिए प्रकाश चाहे छोटा हो या बड़ा, उसके सामने अंधकार टिक नहीं सकता। जैसे अकेला सूर्य अंधकार का नाश करता है, वैसे अकेला दीपक भी अंधकार का निवारण करता है। मैं कहना यह चाहता था कि धर्मकार्य व्यक्ति ही करता है और अकेले-अकेले व्यक्ति ही करता है। फिर उसके इर्दगिर्द पाँच-पचास दूसरे खड़े हो जायँ, तो अलग बात है! परंतु दस मनुष्य मिल कर एक चेतन नहीं बनता है। एक मनुष्य खड़ा हो गया, तो बस, चेतन हो गया। समझने की जरूरत है कि इस वक्त हिंदुस्तान के लिए इससे बेहतर धर्म-मार्ग नहीं है।

(शाक्‌कोट्टै, रामनाड, १४-२-'५७)

---

www.vinoba.in

निधिमुक्ति और दान-धर्म का विकेंद्रीकरण

(अप्पासाहब पटवर्धन)

केंद्रीय निधि के साथ उसका तंत्र एवं शासन भी आ जाता है और निधि केंद्रीय न रही, तो केंद्रीय शासन भी शिथिल हो जाता है। इस प्रकार तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति परस्पर जुड़वाँ भाई ही हैं।

निधिमुक्ति के संकल्प के बाद क्या हर एक सेवक उसका अपना ही बन जायेगा ? संचय, केंद्र और तंत्र का विचार हमें विवेकपूर्वक ही करना चाहिए। संचित निधि न हो, इसका अर्थ यह नहीं कि सेवक लेशमात्र भी संचय न करे और दैनंदिन अन्न-वस्त्रादि की पूर्ति के लिए रोज-ब-रोज प्रयत्न करता रहे। इसके विपरीत, मैं कहूँगा कि सेवक को मानधन या जीवन-वेतन देने की केंद्र-तंत्र-प्रधान व्यवस्था का विसर्जन हो जाने पर सेवक को तो अधिक ही संचय करना चाहिए, याने मासिक वेतन हर पहली तारीख को लेने के स्थान पर अच्छी फसल के दिनों में बारह मास का अनाज और कपास उसे इकट्ठा करके रखना चाहिए। सर्व-सेवा-संघ एक अखिल भारतीय संस्था है। उसने तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति का संकल्प किया, इसका अर्थ इतना ही है कि अब भूदान के लिए अखिल भारतीय तंत्र और निधि नहीं रहेंगे। लेकिन प्रदेश भी अपनी-अपनी केंद्रीय निधि और तंत्र रखे ही नहीं, ऐसी भी बात नहीं है। लेकिन उसे सर्व-सेवा-संघ की मान्यता और आधार नहीं रहेंगे, अपने पुण्य और अपनी प्रतिष्ठा पर उसको जनता के पास जाना होगा।

सर्व-सेवा-संघ ने तंत्र-मुक्ति की, लेकिन हर एक भाषिक प्रदेश के लिए एक प्रकाशन-समिति बनाने का भी तय किया और एक जिला-सेवक भी हो, ऐसा माना, जो कि अपने सहकारियों की मदद से काम करेगा एवं दूसरों से सलाह-मशविरा लेता रहेगा। ऐसे सेवकों के जीवन-वेतन की व्यवस्था जिले में की जा सके, तो इसमें भी कोई गैर बात नहीं है। अर्थात् एक-एक जिले के भूदान-सेवक अब अपने व्यक्तिगत और सांघिक पुण्य के बल पर अपने जीवन-वेतन की व्यवस्था कर लें। इसके लिए उन्हें अधिकाधिक परस्पराभिमुख होना होगा एवं पारस्परिक आत्मीयता, परिवार-भावना, समबुद्धि आदि बढ़ानी होगी। साथ ही उन्हें अधिकाधिक जनताभिमुख भी होकर अत्यंत नम्र, अपरिग्रही, निष्ठावान्, संयमी, सादगीपूर्ण, जागरूक, सेवाशील और 'देशी' भी बनना होगा। सर्व-सेवा-संघ का प्रस्तुत प्रस्ताव इस तरह हर एक भूदान-सेवक के लिए सभी मामलों में "आगे बढ़ो" का संदेश देता है। सेवक जैसे-जैसे आगे उड़ान लेगा, जनता भी उसके पीछे आयेगी।

सेवक अधिक 'देशी' बनें, इसलिए ऊपर मैंने सुझाया कि अपना वेतन वे अब प्रतिमाह ७५), ६०), ३०) रु०, इस तरह न लेकर परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए इतना गेहूँ, इतना चावल, इतनी दाल, इतनी कपास और ऊपर के खर्च के लिए २५ या १० रु., ऐसी व्यवस्था करें। फिर अनाज के भाव बढ़ें भी, तो उसकी चिंता सेवक को नहीं रहेगी। उधर किसान के पास अनाज का भंडार काफी होने से उस पर भी बोझ नहीं पड़ेगा। सर्व-सेवा-संघ ने सेवक के निर्वाह के लिए संपत्तिदान, अनाज-दान, सूतांजलि आदि साधन सुझाये हैं। अनाज में कपास समाविष्ट है और सूतगुंडी तो हमारी रोकड़ या सिक्का ही है।

सेवक की निष्ठा के साथ-साथ जनता का भी अपनापन और समझदारी बढ़नी चाहिए। 'सार्वजनिक सेवा-कार्य सेवक को निर्वेतन ही करना चाहिए,' यह लोगों का खयाल दूर हो जाना जरूरी है। इसीलिए जब पं० नेहरू ३५ साल पहले कॉंग्रेस के मंत्री बने, तो उन्होंने वेतन माँगा। अपनी सारी शक्तियों के साथ काम करने वाले सेवक की व्यवस्था करना उस संस्था या समाज का कर्तव्य ही है, अन्यथा गरीब को तो सेवा करने की ही मनाही हो जावेगी। वेतन लेने वाले कार्यकर्ताओं के बारे में जनता में तुच्छ-भाव रहता है। परिणामस्वरूप निष्ठावान् कार्यकर्ता भी वेतन लेने या लोगों के सामने हाथ फैलाते समय शर्म महसूस करता है। यह स्थिति दूर होनी चाहिए। सेवक आत्मविश्वासपूर्वक जरूरत के अनुसार माँगे और लोग भी उसे आदर और आत्मीयतापूर्वक दें। निधि-मुक्ति के प्रस्ताव ने जैसे सेवकों का आवाहन किया, वैसे गृहस्थों और कुटुंबियों का भी, कि प्रत्येक परिवार की आय में सेवक का भी हिस्सा है और वह उस तक पहुँच जाना चाहिए। संपत्तिदान-यज्ञ की यह भूमिका ही है। परंतु सेवक को भी सत्पात्रता की कसौटी पर चढ़ना होगा।

लोग यह समझ लें कि सरकार समाज-कल्याण के जो कार्य करती है, उसके लिए वह इंग्लैण्ड-अमेरिका से या गुरु-मंगळ ग्रह से पैसा नहीं लाती है, बल्कि हमारा ही पैसा बेतरतीब खर्च करके वह उन कामों को चलाती है। हरिजन छात्र के निमित्त सरकार यदि १२ या १६ रुपया हर माह देती है, तो हमारी जेब में से वह उसके पहले ही २०-२५ रु. निकाल लेती है और उसके आधे तो अपने नौकरों और दफ्तरों पर ही खर्च कर देती है ! शेष रुपये छात्रालयों को ग्रैंट के रूप में दे देती है, लेकिन कितनी ही खुशामदों, परेशानियों, मेहरबानियों के बाद ! मेरे गाँव के बुनकर को अनेक झंझटों और विलंब के अनंतर सरकार रुपये के पीछे दो आना 'रिबेट' देती है, पर उसके लिए भी वह मेरे पास से ही चार आने निकाल लेती है ! दिल्ली तक पहुँचते-पहुँचते उसके तीन आने रह जाते हैं और फिर बुनकर के हाथ में पहुँचते-पहुँचते दो आने हो जाते हैं ! साल-पंद्रह महीने इसके लिए देने पड़ते हैं, सो अलग ! मगर हम ऐसे बुद्धू, परपोषक और नतद्रष्ट (न + तत् + द्रष्टा = सामने का न देखने वाले) हैं कि पिछड़े विभाग के अफसर को २५ रु. हम ऐसे दे देंगे, लेकिन हरिजन छात्र के माँगने पर उसे स्लेट-पुस्तक के लिए भी चार-पाँच आने नहीं देंगे ! बुनकर भी आना-आध आना अपने माल पर ज्यादा दाम माँगता है, तो हम उसे दुत्कार देते हैं। सोशल वेलफेअर बोर्ड के 'समाज-सेवक' को उधर से डेढ़ सौ रुपया बालाबाला मिल गया कि वह हमें नहीं दिखेगा, लेकिन 'भूदान-सेवक' को तीस रुपया वेतन दिया कि वह उसकी आँखों में जरूर आ जायेगा ! सरदार पटेल के गांधी स्मारक-निधि को वे १०१ रुपया दे देंगे, लेकिन "कोंकण का गांधी" (अप्पा पटवर्धन) द्वार पर आया, तो उसे चवन्नी देने में भी सकुचायेंगे ! हाँ, उसके मरते ही उसके स्मारक के लिए लाखों रुपया जरूर इकट्ठा करेंगे ! मृत पितरों को तो पिंडदान करेंगे और उस निमित्त ब्राह्मण को मिठाइयाँ भी खिलायेंगे, लेकिन जीते जी बाप को अनाज का कौर भी सुख से नहीं खाने देंगे ! यह भोंदूपन (या पाजीपन ?) हमें छोड़ना चाहिए।

निधि-मुक्ति का प्रस्ताव याने स्थानिक, तात्कालिक, सीधे और प्रत्यक्ष दान की सिफारिश ही है और संचित-केंद्रित निधि का अप्रत्यक्ष निषेध भी है। जैसे सत्ता का, वैसे दानधर्म का भी विकेंद्रीकरण होना चाहिए।

ग्रामगोष्ठी में :

सर्वोदय का पाठ

बसता है जो एक नगर यदि, केन्द्रित करके उद्योगों को।
उजड़े उससे गाँव हजारों, बेकारी खाती लोगों को ॥
नंगा अभिनय हिंसा करती, और अहिंसा करती क्रंदन।
शोषण राक्षस-रूप धार कर, कण-कण में करता है नर्तन ॥
पिसी जा रही कला बिचारी, हाथों का कौशल रोता है।
वह शोषक श्रमिकों के खूँसे, अपने हाथों को धोता है ॥
दिन भर करके कड़ा परिश्रम, श्रमिक झोंपड़ी में रहता है।
पत्नी भूखी सो जाती है, दूध-दूध बच्चा कहता है ॥
दुबले-पतले वे गरीब के, बच्चे हों जैसे कंकाल।
दूध-क्रीम की बात कहाँ जब, बदी न पूरी रोटी-दाल ॥
धँसी हुई हैं आँख अंदर, मुँह पीला है चिपके गाल।
फटे हुए गंदे चिथड़ों में, मानवता लिपटी बे-हाल ॥
चीख रही है दबी मनुजता, आँसू बरसा रहा किसान।
बिलख रहा दर-दर का मारा, अरे आज शोषित इन्सान ॥
खून-पसीना बहा-बहा कर, पैदा करता जो मजदूर।
आँखों में आँसू भर करके, आज वही भूखा भरपूर ॥
हवा धूप की तरह भूमि पर, जन-जन का अधिकार रहेगा।
शोषण-मुक्त अर्थ-रचना ही, जीवन का आधार रहेगा ॥
दंभ और शासन के बल पर, नहीं मनुज बाँधा जा सकता।
मानव का शोषण कर कोई, नहीं बिना श्रम के खा सकता ॥
खाने का अधिकार उसे ही, जो कुछ उत्पादन करता है।
सेवा करता है दरिद्र की, भव-समुद्र से वह तरता है ॥
इस समाज में श्रमनिष्ठा के, नव-मूल्यों को स्थापित करने।
"बन्द करो गाँवों का शोषण," इस विचार को मन में भरने ॥
घूम रहा है सन्त विनोबा, भूमिदान का लेकर नारा।
सर्वोदय का पाठ विश्व में, असहायों का एक सहारा ॥

—सतीश कुमार, बोधगया

---

www.vinoba.in

विनोबाजी का स्वास्थ्य

(दामोदरदास मूंदड़ा)

उस दिन बाबा एक ईसाई स्कूल में ठहरे थे। डेरे पर लौटे ही थे और "गीता प्रवचन" पर हस्ताक्षर देना शुरू ही किया था कि उनको कुछ अस्वस्थता महसूस होने लगी। बार-बार पेट पर से हाथ घूमने लगा। कलम डेस्क पर धर दी, किंतु फिर हस्ताक्षर देने का काम शुरू किया। पास में श्री० मीरा बहन (व्यास) खड़ी थीं; समझ नहीं पा रही थीं कि हजारों "गीता प्रवचनों" पर हस्ताक्षर करते रहने वाले हाथ आज ऐसे सकुचा क्यों रहे हैं। संदेह तो हो ही गया था कि अस्वस्थता है। आखिर हाथ रुक गया और कई लोगों को निराश होना पड़ा—जो घर लौटने के बजाय रास्ते पर ही रुक गये।

सहसा बाबा के पेट में तीव्र दर्द शुरू हो गया था। सभी की आँखें इस महामानव की ओर लगी रहीं। एक क्षण में वातावरण में गंभीर चिंता छा गयी। बात की बात में सारा गाँव वहाँ जुट गया।

बाबा को कै की प्रेरणा हुई, पर कै हुई नहीं। शौच हो आये। लेकिन कमजोरी इतनी महसूस होने लगी कि बाथरूम के बाहर ताई का बिस्तर लगा हुआ था, उसी पर लेट गये। इतने में डॉक्टर आ पहुँचे। दोपहर को बाबा ने नित्य की तरह एनिमा लिया ही था। फिर भी डॉक्टर की सूचनानुसार ग्लिसरीन की सिरिंज ले ली, जिससे पुनः एक बार शौच हुआ, परंतु पेट के दर्द में फरक नहीं हुआ। वेदना तीव्र से तीव्रतर और तीव्रतम होती गयी—बाबा के मुख से अब 'आई-आई' (माँ) की दर्द-भरी धीमी आवाज निकलने लगी। डॉक्टर ने कुछ गोलियों के सेवन की पुनः पुनः प्रार्थना की। ऐसे दर्द के लिए अलीम्यूनियम की गोलियाँ उन्होंने सुझायी। बाबा ने ध्यान से सब सुना। फिर बहुत नम्रता से कहा—"मैंने अब तक इसके लिए कोई दवाई नहीं ली है,"—लेकिन इतना बोलते हुए भी उन्हें बड़ा कष्ट हो रहा था—अब तक तो केवल दर्द की ही तीव्रता थी—अब जी भी घबराने लगा—साँस लेने में कष्ट होने लगा। सभी की मनःस्थिति एकदम चिंतित हो जाना स्वाभाविक था। सिवा मौन प्रार्थना के कोई कुछ नहीं कर सकता था। ज़िला के मुख्य अधिकारियों को फोन से सूचना देना उचित समझा गया। वेदना और भी तीव्र हुई, गत पाँच-सात बरसों में ऐसी तकलीफ सहते उन्हें हम लोगों ने कभी देखा नहीं था।

खिड़की के बाहर बाबा की निगाह गयी, तो सैंकड़ों लोगों की चिंतायुक्त मुद्राएँ देख कर उन्होंने कहा—"एक आदमी के कारण कितने लोगों को चिंता हो जाती है!" इन सबकी चिंता दूर करने वाले सर्वशक्तिमान को ही मानों उन्होंने हृदय से आवाहन किया। इधर पास में जो कोई थे, सभी के हृदयों में द्रौपदी और गजेंद्र की आर्तता प्रतिध्वनित हुई हो, तो आश्चर्य नहीं।

ताई ने पेट पर गरम पानी की थैली से सेंकने का आग्रह किया, बाबा ने स्वीकार किया। कुछ क्षण सेंक हुआ होगा कि एक बार तो दर्द का वेग अत्यधिक तीव्र हुआ और दूसरे ही क्षण कै की प्रेरणा हुई और कै हो गयी। दोपहर का संतरा और बाद का दही, सभी बाहर निकल आया—बाबा को काफी शांति मालूम हुई।

उस कै को देख कर सहज ध्यान में आ गया कि पचन-क्रिया में गड़बड़ी हुई है। ठीक भी था, क्योंकि रात को बाबा सो नहीं पाये थे। जहाँ पड़ाव था, वहीं पड़ोस में विवाहोत्सव के निमित्त आतिशबाज़ी बड़ी ज़ोरों की हुई थी। दूसरे रोज सवेरे मुकाम पर पहुँचते-पहुँचते धूप भी सर पर खूब चढ़ आयी थी और दोपहर भी बानर-सेना के कारण बाबा को विश्राम नहीं मिल पाया था—इस सबका पचन-क्रिया पर परिणाम हो गया था।

जाड़ा बाबा को शुरू से लग ही रहा था। अँगीठी से बाबा ने थोड़ा सेंक भी शुरू में किया था। अब कै के बाद जाड़ा और भी बढ़ गया। शरीर में ज्वर भी मालूम हुआ, लेकिन संकट टल गया, ऐसा ही सबने महसूस किया। खटिया पर लिटा कर अब बाबा को बाहर हॉल में लाया गया। बाबा स्वयं भी काफी शांति महसूस कर रहे थे। खटिया जब भीतर से बाहर आयी, तो उन्होंने पूछा—"चार लोग हैं न?"—ऐसा कठोर विनोद वे ही कर सकते थे, लेकिन उनको प्रसन्नता भी मिलनी चाहिए थी, तो जवाब दिया गया, "जी नहीं, त्रयाणां धूर्तानाम् हैं।" थोड़ी धूर्तता बरती भी गयी थी कि कल से दूसरा जिला शुरू होता था—ज़िलासेवक उपस्थित थे—आगे का कार्यक्रम स्थगित करने का इशारा तार से दिया गया था और कुछ दिन यहीं विश्राम करने की व्यवस्था भी कर दी गयी थी। शायद बाबा को इस सबका आभास हो चुका हो—अंतःप्रेरणा से, इसलिए उन्होंने ताई से कहा—"महादेवी! अभी बाबा पाँच मील चल कर जा सकता है।" चतुर ताई ने फौरन बात काटते हुए कहा कि "आपको चुपचाप आराम करना है!" पर उस जाड़े और बुखार में भी बाबा ने बातचीत जारी रखी।

"कितने मील हैं आज का पड़ाव?"

"नौ मील, दो फर्लांग।"

"डॉक्टरों को आना हो, तो अभी आ सकते हैं। यात्रा साढ़े चार बजे शुरू होगी।" अब ताई-माँ से नहीं रहा गया। दुःख और खीज, दोनों उभड़ आयी—"आप किसीका सुनते ही नहीं—फिर सबको फिक्र हो जाती है! आज यात्रा नहीं होगी। डाक-बंगला अच्छा है और अगर आप चलने का ही हठ करेंगे, तो मोटर में चलना होगा। कार तैयार है।"

"देखो महादेवी, यह बहस का विषय नहीं है। यह हमारे और ईश्वर के बीच की बात है। जब तक शरीर यात्रा कर सकता है, वह करेगा। जिस दिन पाँव थक जायेंगे और ईश्वर नहीं चाहेगा—वह मोटर में बैठा देगा। यात्रा पैदल ही होगी, तुम मोटर लेकर पीछे-पीछे आ सकती हो।"

हर दो मील पर ताई कार से उतर कर बाबा को कार में सवार होने का आग्रह करतीं और बाबा कोई-न-कोई निमित्त बना कर टाल देते। आखिर जब ताई ने नहीं माना, तो कहा—"जाओ, सातवें मील पर इंतजार करो।" जब सातवाँ मील भी आ गया, तो सहसा हँस कर बोले—"अरे, अब तो आ पहुँचे! जाओ, अगले मुकाम पर जाकर सारा प्रबन्ध करो। हम लोग बस आये ही।"—ताई ने देखा कि आखिर बाबा ने उन्हें ठग ही लिया। चुपचाप रवाना हो गयीं। आर्यनायकम्जी ने कहा—"बाबा, आपने आज सभी डॉक्टरी कानूनों को ठुकरा दिया। डॉक्टरों ने तो हमसे साफ कहा था कि पेशंट को आज किसी भी हालत में चलना नहीं चाहिए।"

"मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरीम्," अपने तरीके से बाबा जवाब देने लगे, "परमानंद माधव की कृपा से क्या नहीं हो सकता?" फिर रामदास का श्लोक सुनाया—"भगवान् नित्य हमारी सन्निधि में ही है—हमारा यत्किंचित् प्रयत्न भी वह कृपा भरी दृष्टि से देखता है। कैवल्य-दानी मुखानंद आनंद-राम अपने भक्तों का अभिमानी है, उनकी कभी उपेक्षा नहीं करता। उसको तो अपने दास का अभिमान है, परंतु हम सच्चे दास बनते कहाँ हैं, ताकि भगवान् हमारा अभिमान रखे।"

और फिर कहा—"सोंगें-छंदें कांहीं देव जोड़े नाहीं—दंभ से, नाटक करने से भगवान् नहीं जुड़ते हैं।"

डॉक्टर दिन भर साथ रहे। दो बार बाबा की जाँच उन्होंने की। पुराने अल्सर के साथ-साथ उन्हें 'गॉल ब्लॅडर' का भय प्रतीत हुआ। ब्लड प्रेशर भी बहुत कम था—९६.५८। बुखार नहीं था, पर कमजोरी बहुत थी। फिर भी वे सवा ९ मील चल कर तो आ ही गये थे। शाम को प्रार्थना-प्रवचन में बोले भी, दोपहर कार्यकर्ता-सम्मेलन भी हुआ। डॉक्टर तो उनकी सारी दिनचर्या देख कर स्तंभित ही हो गये थे—प्रार्थना-प्रवचन में बाबा ने कहा—"हम चाहते हैं कि कार्यकर्ता सातत्य सीखें। जब से भूदान का काम चला है, बाबा का काम सतत चल ही रहा है। माणिक्यवाचकर ने ठीक ही कहा है कि—'तानवेंदु एनदु उल्लम पुहुन्दु—भगवान् ने खुद आकर मेरे हृदय में प्रवेश किया!' ऐसा हो सकता है, परंतु कब? जब सेवक सतत सेवा में लगे रहेंगे—ठीक वैसे, जैसे सूर्य-नारायण किरणों से अलग नहीं, पानी नमी से भिन्न नहीं रहता। सेवा, भक्ति, कपड़े की तरह नहीं कि अनुकूलता के अनुसार पहिनी या उतारी जा सके—वह तो, देह के समान, देह से सतत चिपकी ही है; ऐसी सातत्य की भावना होगी, तो जो बीज यहाँ बोया गया है, वह जरूर फलेगा-फूलेगा। सेवक संख्या में कम हैं, इसकी पर्वाह नहीं—दुनिया में क्रांतियाँ एक-एक व्यक्ति ने की है। जो भी थोड़े लोग हैं, वे अगर काया-वाचा-मनसा सतत काम में लगे रहेंगे, तो जमाना उनके साथ है, ऐसा हम उनसे कहना चाहते हैं।"

सातत्य-योग की महिमा को आज पुनः एक बार अपने उदाहरण से ही बाबा ने सिद्ध जो कर दिया था।

डॉक्टर विदा लेने के लिए आये। "गीता-प्रवचन" पर हस्ताक्षर किया। भक्ति-भाव से साष्टांग-प्रणिपात किया, गद्गद् होकर लौटे। रास्ते में मुझसे कहा—"मैं आया तो था उन्हें ट्रीटमेण्ट देने, पर खुद ट्रीटमेण्ट लिये जा रहा हूँ! मेरा भाग्य है कि इस निमित्त उनका सत्संग हुआ। उनका वैद्य तो परमेश्वर ही है। उन्हें हमारे जैसे वैद्यों की क्या आवश्यकता है?"

---

www.vinoba.in

तमिलनाड़ की भूदान-यज्ञ-वार्ता

(मीरा व्यास)

'कडै' के ग्रामवासियों में से एक भाई ने विनोबाजी से पूछा कि "रामस्वामी नायकर कहते हैं भक्ति की जरूरत नहीं है, चारित्र्य की जरूरत है।"

इस पर विनोबाजी ने कहा, "सत्य-निष्ठा, प्रेम, करुणा, संयम, सचाई, परोपकार की भावना, समानता; ये सारी चीजें मिल कर चारित्र्य बनता है। सब लोगों में अगर ये सारी चीज़ें आ जाती हैं, तो देश ऊँचे चढ़ेगा। तिसपर भी भक्ति है, तो अच्छा है, दूध में शक्कर मिली हुई है। अगर दूध भी नहीं है और शक्कर भी नहीं है, तो लड़ाई है। लेकिन वे कहते हैं कि दूध काफी है। तो उसमें क्या लड़ाई? दूध होगा, तो शक्कर डाल सकेंगे। दूध ही नहीं होगा, तो शक्कर क्या डालेंगे? अगर वे कहते कि शहद नहीं खाना चाहिए, जहर खाना चाहिए; तब तो उनके साथ लड़ेंगे। लेकिन वे कहते हैं कि गुड़ खाना चाहिए, शहद की जरूरत नहीं है, तो तुम गुड़ खाओ भैया! गुड़ भी अच्छा ही है। हमको दुनिया में सबका विचार जितना एक हो सकता है, उतना एक करना है। सबमें से अच्छा अंश हमको लेना है। यह हिंदू-धर्म की खूबी है। कोई एक ही ग्रन्थ पढ़ो, वह आपको ऐसा नहीं कहता है या सात दिनों में से कोई खास एक दिन ही उपवास करो। ऐसा भी नहीं कहता है, जैसा कि मुस्लीम धर्म में 'कुरान' ही पढ़ना चाहिए, ईसाई धर्म में इतवार को ही प्रार्थना करनी चाहिए, जैसा है, वैसा कोई बंधन हिंदू धर्म में नहीं है।"

दूसरे एक भाई ने पूछा कि "यहाँ रामायण के बदले "देवासुर युद्ध" नाम का एक नाटक खेला जाता है। उसमें देव बुरे और असुर अच्छे बताये हैं। इससे लोगों में काफी असंतोष फैलता है, तो क्या करना चाहिए?" विनोबाजी ने कहा:

"उनकी भाषा में अगर असुर याने सहयोग से काम करने वाला, झूठ न बोलने वाला, शराब न पीने वाला है और देव याने ठग, भोगी, शराबी, विलासी, इंद्रियों पर जिसका निग्रह नहीं है, वैसे लोग हैं, तो अब इस दृष्टि से जिनको वे असुर कहते हैं, वे अवश्य अच्छे हैं और जिनको बुरे कहते हैं, वे अवश्य बुरे हैं। अजीब-सी बात है, परंतु वेद में भी भगवान् को असुर कहा ही है। पारसी भाषा में भी देव यानी भूत, प्रेत, पिशाच, दुष्ट लोग और असुर यानी परमेश्वर! यह तो भाषा का झगड़ा है। ऐसे एक-दूसरे के माने हुए परमेश्वर की निन्दा करने का काम चलता है। विष्णु का भक्त शिव की निन्दा करेगा, शिव का भक्त विष्णु की निन्दा करेगा। तुलसीदास ने कहा है कि वे ही रामचंद्रजी के उपासक हैं, जिन्होंने शिव को शिवता, हरिको हरिता और ब्रह्म को ब्रह्मत्व दे दिया। हमने 'तिरुक्कुरळ' के बारे में एक निबंध पढ़ा था कि परमेश्वर के चरणों में हम क्यों नमस्कार करते हैं, तो अलग-अलग देवता के अलग-अलग चेहरे होते हैं। कोई तीन मुखवाला तो कोई चार मुखवाला, कोई चक्रधारी तो कोई त्रिशूल-धारी! ये सारे भेद मिटाने के लिए चरण-वन्दन ही करने का तय कर लिया, तो कोई भेद रहेगा नहीं। प्रभु के चरणों में गया, तो सारे झगड़े मिट जाते हैं! सब भक्तों का मेल करने की यह युक्ति है। मैंने चरण-वन्दन का अर्थ यह लिया था कि भक्त परमेश्वर के सामने नम्रता के वास्ते चरणों में सिर झुकाता है, लेकिन यह जो दूसरा अर्थ है, उसमें मधुरता है।"

वेदारण्यम् में श्री रामकृष्ण-मिशन के लोग बाबा से मिलने आये। बाबा ने उनसे अधिक सुना। वे कहते थे कि रामकृष्ण के अनुयायियों में दीक्षा के लिए तीन सीढ़ियाँ हैं। पहली प्रोबेशनरी-प्राथमिक प्रयोगात्मक, दूसरी ब्रह्मचारी की और तीसरी संन्यासी की। भारत में कुल २२५ केन्द्र हैं। अमेरिका में ३२ हैं और सिलोन में २२ केन्द्र हैं। आचार्यों के लिए कोई कड़ा नियम नहीं है, परंतु काम न करना, कुटीर में रहना, ध्यान करना, भिक्षा माँगना, ऐसा भी कोई नियम नहीं है। जगत् की सेवा करते-करते मुक्ति पाना, जीवित भगवान् की सेवा में जिन्दगी समर्पण करना, यही मुक्ति है, यह विवेकानंद ने नूतन मुक्ति-मार्ग दिखाया। "जब तक एक कुत्ता भी इस दुनिया में भूखा रहता है, तब तक मैं स्वर्ग में जाना नहीं चाहता हूँ," यह विवेकानंद का कथन है। विनोबाजी ने रामकृष्ण मठ-वासियों के सामने रामकृष्ण कुटीर में कहा था कि "रामकृष्ण ने अद्वैत के साथ सेवा जोड़ दी और गांधीजी ने सेवा के साथ कर्मयोग और उत्पादन जोड़ दिया।" अब रामकृष्ण के पंथ में बहनों को भी दीक्षा दी जाती है। ६०० शिक्षित बहनें महिलाश्रम में हैं, जिनमें से २१ को ब्रह्मचर्य की दीक्षा दी गयी। आखिर में बाबा ने उनको कहा कि उपनिषद ने कहा है कि "आमायन्तु ब्रह्मचारिणी स्वाहाः। मैं कहता हूँ "आमायन्तु संन्यासिनो स्वाहाः।"–भूदान के लिए घूमने के लिए मुझे आपके संन्यासी चाहिए। हमारी राय में भूदान आपके काम का एक हिस्सा होना चाहिए। आप लोगों को भूदान-यज्ञ का काम उठा लेना चाहिए। आप लोगों के काम की यह एक्स्टेंशन सर्विस है।"

वेदारण्यम् में दिन भर मुलाकातें और सभाएँ होती रहीं। दोपहर में विनोबाजी आश्रम देखने के लिए गये। आश्रमवासियों के साथ घंटा भर चर्चा करते रहे। प्रश्न पूछा गया कि "भूदान, ग्रामदान से व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा को मदद नहीं मिलती है।" बाबा ने कहा, "माता-पिता अगर बच्चों के समान रहते हैं, तो व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा को क्या विरोध आयेगा? जब सारी दुनिया समुद्र में लीन हो जाती है, तो समुद्र में लीन न होने में किसी एक नदी का हित क्या है? नदी का साफल्य उसीमें है कि वह समुद्र में लीन हो जाय। वैसे व्यक्ति का विकास कभी नहीं होगा, अगर वह अपनी सारी सेवा समाज को अर्पण नहीं करेगा।"

क्रांति और परिस्थिति-परिवर्तन में क्या फर्क है, इसके बारे में पदयात्रा में विनोबाजी प्रकट चिंतन कर रहे थे—"कोई मकान या आश्रम बाँधना यह कोई क्रांति नहीं है, वह अच्छा काम हो सकता है। अगर मेहनत करने में न मानने वाले कॉलेज के प्रोफेसर और विद्यार्थी या डॉक्टर–वकील मेहनत की प्रतिष्ठा समझ कर श्रम करके वह मकान बाँधते हैं, तो वह क्रांति है; क्योंकि वे पूर्वस्थापित मूल्यों को तोड़ते हैं। इसी तरह कोई अंबर चरखा ढूँढ़ निकालता है, तो उसमें कोई क्रांति नहीं है। हाँ, अगर उस अंबर चरखा ढूँढ़ निकालने में उसका उद्देश्य मात्र समाज-सेवा का हो, तो वह क्रांति कही जा सकती है। बचपन में हमारे घर के सामने एक बूढ़ा ब्राह्मण रहता था। वह रोज़ अपनी तकली पर सूत कात कर जनेऊ बनाता था। शायद उसी पर उसके जीवन का गुज़ारा चलता था। हमारी मित्र-मंडली रोज़ उसकी हँसी उड़ाती थी कि मिल के जमाने में यह शख्स तकली चलाता है, तो कैसे चलेगा? पर एक जमाने में हमने सालों तक घंटों भर तकली चलायी। यह क्रांति है। कोई नयी चीज़ करते हो और वह क्रांति हो जाती है, ऐसा नहीं है। मूल्य-परिवर्तन यही क्रांति है। नहीं तो डार्विन की थियरी (सिद्धान्त) के मुताबिक प्राणियों का मनुष्य में परिवर्तन हुआ है, तो उसको भी क्रांति माननी होगी। आपका छोटा लड़का पहले बोल नहीं सकता था, अब बोलने लगा है। तो वह क्या क्रांति हो गयी? आपका लड़का पहले अस्वच्छ रहता था, अब बड़ा हो गया, इसलिए कुछ स्वच्छता का ख्याल आ गया है और कुछ आपने भी समझाया है, इसलिए वह स्वच्छ रहने लगा है, तो क्या वह क्रांति हो गयी? जो परिवर्तन प्रकृति करने वाली थी, वह आपने किया, इतना ही फर्क रहा! हाँ, अगर किसी जानवर को आपने स्वच्छता सिखायी होती, तो कहते कि वह क्रांति हुई। क्रांति याने मूल्य-परिवर्तन है, परिस्थिति-परिवर्तन नहीं।"

त्याग का संदेश सुनाती कावेरी बह रही है। बाबा ने क्रांतिवर्ष के आरंभ में शकुन के तौर पर अपनी अनुयायी श्री निर्मला बहन और कुसुम बहन को क्रांति-कार्य के लिए रवाना किया है। उन्हींके शब्दों में–"दोनों लड़कियों को भेजना, यह मेरा बड़ा त्याग है। उनकी बराबरी का अब यात्रा में कोई नहीं रहा। उन पर मेरा विश्वास बैठ गया था। लेकिन उनकी 'थियरी' अब पूरी हो गयी थी, इसलिए 'प्रॅक्टिकल' (प्रयोग) के लिए मैंने दोनों को भेज दिया है, क्योंकि वह जरूरी था!"

'अशिक्षित' शिक्षक!

आज एक भाई आगरा का एक मजेदार किस्सा सुनाते थे। वहाँ प्रांत भर के शिक्षकों का संमेलन था। पर उन शिक्षकों को भूदान या ग्रामदान क्या है, वह कुछ मालूम ही नहीं था! २००० ग्रामदान हुए और ६ लाख लोगों ने ४३ लाख एकड़ जमीन दी है, इसकी खबर जिस किले में वे रहते हैं, वहाँ पहुँची ही नहीं थी! यह मरे हुए शरीर का लक्षण है। पक्षाघात में शरीर के एक हिस्से को छूते हैं, तो दूसरे हिस्से को कुछ पता ही नहीं चलता है, वह 'डेडनूड' (मृतवत्) हो जाता है। इस तरह दो हजार ग्रामदान हुए, लेकिन आगरा में इकट्ठा हुए शिक्षकों को वह मालूम ही नहीं था! अगर दो-चार गाँवों के लोगों ने मारामारी की होती और जमीन छीन ली होती, तो कुल दुनिया के लोगों को पता चलता और दुनिया के कुल अखबारों में भी चर्चा चलती कि अरे, फलाँ गाँव में क्रांति हो गयी, जमीन छीन ली गयी और जमीन बाँटी गयी! परन्तु २००० गाँवों ने प्रेम से अपनी जमीन गाँव को दे दी, तो उसका कोई असर ही शिक्षकों पर नहीं है!

(वलंजीमन, तंजाऊर २६-१-५७) —विनोबा

---

www.vinoba.in

तमिलनाड़ की क्रांतियात्रा से–

(दामोदरदास मूँदड़ा)

ता. ८ फरवरी से १४ फरवरी तक के सप्ताह में कुल यात्रा करीब ७० मील की हुई, जिसमें दो-तीन रोज़ बारह-बारह मील बालू में चलना पड़ा और एक दिन का रास्ता काफी कँटीला था।

एक जगह एक भाई ने सवाल किया कि "गाँव के ४-५ लोग छोड़ कर यदि सब लोग ग्रामदान के लिए राज़ी हो जायँ, तो क्या करें?"

"तो, बाकी के सब लोग अपनी ज़मीन को भूमिहीनों के साथ बाँट लेवें और सब लोग प्रेम से सारे गाँव को अपनी सेवा देवें। उन चार-पाँच लोगों की ज़मीन अब तक अकेले-अकेले बँटाई या मज़दूरी पर जोत पर उठती थी। वह अब इस आंशिक ग्रामदानी लोगों की कमेटी द्वारा ली जावेगी और सबको उससे लाभ होगा।"

फिर आगे कहा—"हमने तो कल ही कह दिया है कि यह आंदोलन लेने का नहीं, देने का है। हर एक को इसमें देना ही देना है। यह आंदोलन अधिकारों का नहीं, कर्तव्यों का है।"

एक भाई ने पूछा कि "बाबा, क्या आप मानते हैं कि यह आंदोलन इसी वर्ष संपन्न हो जावेगा?"

प्रश्न पूछने वाले भाई ने भूदान के लिए अपना जीवन समर्पण किया है। गंभीर चिंतन भी करते हैं। उनके निमित्त बाबा ने उस रोज पाँच वर्ष का नया कार्यक्रम देश के सामने रख दिया :

> "हमारा तात्कालिक कार्यक्रम तो यह है कि इस देश में कोई भूमिहीन न रहे। यह कार्यक्रम सन् सत्तावन् में पूरा हो जाना चाहिए। परंतु जो लोग यह समझते हैं कि सत्तावन् की क्रांति से हमारा काम समाप्त हो जाता है, वे गहराई में नहीं जाते। हमारा एक कार्यक्रम जैसा त्वरित का है, इसी वर्ष पूरा करने का है, वैसा ही हमारा एक लम्बा कार्यक्रम भी है और वह है, आगामी पाँच वर्ष में पाँच लाख गाँवों में ग्रामराज्य कायम करना।

"ग्रामराज्य कायम होगा, तो मद्रास और दिल्ली में जो 'नौकर' लोग बैठे हैं, वे भी जग जावेंगे, क्योंकि जब मालिक जागता है, तो नौकर को भी जागना ही होता है। मालिक सुस्त, तो नौकर भी सुस्त! और मालिक जाग्रत तो नौकर भी जाग्रत!"

तिनेवेली जिले के कार्यकर्ता तीन ग्रामदान लेकर आये। बाबा मदुरा जिले की दूसरी यात्रा पूरी करने पर वहाँ जाने वाले थे। कार्यकर्ताओंने निवेदन किया कि एक सौ एक ग्रामदान द्वारा वे बाबा का स्वागत करेंगे। उपरोक्त तीनों गाँवों में यदि अभी से निर्माण-कार्य शुरू किया जाय व इन्हें आदर्श ग्राम बनाने की दृष्टि से वहाँ कार्यकर्ता बैठाये जायँ, तो और ग्रामदान मिलने में अधिक सुविधा होगी, इस बात की ओर भी उन्होंने बाबा का ध्यान आकर्षित किया, तो उन्होंने कहा—

> "अगर वैसा वचन देकर ग्राम दान में प्राप्त किये हों, तो वह ग़लत काम हुआ है। हमें तो पाँच लाख गाँव ग्रामदान में चाहिए। कितने गाँवों में आप कार्यकर्ता बिठावेंगे? कितने गाँवों को आदर्श बनावेंगे? और आप आदर्श बनाने वाले और कार्यकर्ता बिठाने वाले होते हैं कौन? आपका काम तो लोगों को विचार अच्छी तरह समझा देने का है, फिर अमल तो उन्हें खुद करना है। ग्रामदान द्वारा एक बड़ा परिवर्तन, जो ग्रामवालों के जीवन में सहसा हो जाता है, वह तो यह है कि जो मनुष्य अब तक केवल अपने और अपने परिवार के लिए ही एक स्वार्थी आदमी की तरह सोचा करता था, वह अब सारे गाँव के लिए सोचेगा और उनके सारे सोचने में परमार्थिक दृष्टि आ जावेगी। यह परिवर्तन साधारण परिवर्तन नहीं है। फिर ग्रामवाले स्वयं समर्थ होते हैं–सब मिल कर सोचेंगे और गाँव के लिए जो जो आवश्यक हैं, करेंगे। हमने तो कह दिया है कि यदि कर्जा निकालने की या भीख माँगने की भी जरूरत हुई, तो एकाकी कोई यह काम नहीं करेगा, सब मिल कर करेंगे। मालकियत मिट जाती है और सारा गाँव एक परिवार बन जाता है, यही ग्रामदान की सबसे बड़ी क्रांति है।"

फिर आगे कहा, "सत्ताईस ग्रामदान के लिए स्पेशल ऑफिसर नियुक्त हुआ, लेकिन पाँच लाख गाँव मिल जावेंगे, तो सरकार ही बदल जावेगी!"

फोर्ड-फौंडेशन की ओर से आये हुए एक अमेरिकन भाई ने विनोबाजी से प्रश्न पूछा कि "संस्थाओं और जनता की ओर से मिलने वाली सहायता को आप लोग संपत्ति-दान क्यों नहीं मानते? उसके खिलाफ भारत में शंका का वातावरण क्यों है? ऐसा क्यों मानते हैं कि उसके निमित्त अमेरिका यहाँ लड़ाई के अड्डे बनाना चाहता है?"

विनोबाजी ने कहा :

"अमेरिकन् संस्थाएँ और अमेरिकन् जनता की ओर से हम न बोलें, क्योंकि भले-बुरे लोग सभी जगह होते हैं। हम व्यक्तियों की बात करें। संस्थाओं के हृदय नहीं होता—हृदय व्यक्तियों को होता है और मेरा विश्वास है कि अमेरिका में भी सद्भाव रखने वाले लोगों की कमी नहीं है। दो बातें हैं। जो कुछ दिया जाय, व्यक्तियों की ओर से दिया जाय, व्यक्ति दें और परिपूर्ण हृदय से दें। सहानुभूति की भावना से दें और वे लोग दें, जो हिंदुस्तान की तरह आवश्यकता पड़ने पर रूस को भी उतने ही प्रेम और सद्भाव से दे सकते हैं। डॉक्टर मरीज़ के विचारों को नहीं देखता। वह उसकी सेवा ही करना जानता है। अनुदान में आदर्श डॉक्टर का होना चाहिए। तब आप देखेंगे कि कैसे प्रेम से प्रेम ही निर्माण होता है।

"दूसरी बात यह है कि जो भी पैसा दिया जाय, शुद्ध कमाई का हो, रंगा हुआ न हो। गलत साधनों से कमाया पैसा, बेहतर है कि अमेरिकन् भाई अपने देश-वासियों के लिए ही खर्च करें। मैं पसंद तो करूँगा कि शरीर-परिश्रम के द्वारा जो धन-संग्रह हुआ हो, उसका अंश वे भारत को दें। ऐसे दान में निश्चय ही त्याग निहित रहता है।"

भूदान-आंदोलन के बढ़ते चरण

बिहार में ग्रामदान की प्रगति

बिहार में श्री जयप्रकाश नारायणजी को मुजफ्फरपुर जिले में १००० एकड़ का २००० जनसंख्यावाला मिर्जानगर; और सीतामढ़ी जिले में १५५ बीघे का १०३ परिवार-संख्यावाला माधोपुर, ऐसे दो गाँव ग्रामदान में मिले हैं।

दरभंगा जिले के सदर सबडिविजन में ६०० जनसंख्यावाला ३८३ बीघे का भजुआरा ग्राम ग्रामदान में मिला है।

१ ली जनवरी से श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने ७ दिनों का पूर्णियाँ जिले के विभिन्न गाँवों का भ्रमण आरम्भ किया। इस भ्रमण-काल में १ली ता० को ही उन्हें सिरमता ग्राम (रूपौली थाना) का ग्रामदान मिला। सर्वोदय-पक्ष के अवसर पर बेला पेमू (सर्वोदय-टोला) धमदाहा थाना-निवासियों द्वारा ता० ७ फरवरी '५७ को रंगपुरा पड़ाव पर ग्रामदान समर्पण किया गया।

सर्वोदय-मेला गंगा-कोसी-संगम में ता० १२ फरवरी को सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष, श्री धीरेन्द्र मजूमदार को बथनाहा भगवती-स्थान तथा बलदेव ग्राम-निवासियों ने अपना-अपना ग्रामदान समर्पण किया और उसी स्थान पर उनके सभापतित्व में हो रहे भूदान-किसान-सम्मेलन में इसकी घोषणा कर ग्राम-दानियों को पुष्पमाला और तिलक से सुशोभित किया गया। इस प्रकार पूर्णियाँ जिले में ग्रामदान की धारा अपने मुक्त प्रवाह में बह चली है।

बिहार में जनआधारित वितरण का श्रीगणेश

श्री जयप्रकाशजी के आश्रम, सोखोदेवरा (गया) में ता० १७ फरवरी को जन-आधारित वितरण-कार्य सम्पन्न हुआ और जन-आधारित भू-वितरण का श्रीगणेश हुआ। कौआकोल थाने के पदयात्रा के संयोजक डा० रामगोपाल जोशी उपस्थित थे। पिछली बार कार्यकर्ताओं के द्वारा वितरण होने पर गाँव में असंतोष फैला था, लेकिन गाँववालों ने इस बार जन-आधारित वितरण प्रेम के साथ सफल बनाया।

गाँव की सर्वानुमति से पंद्रह व्यक्तियों को प्रतिनिधि रूप में चुना गया। उन्होंने स्थानीय परिस्थिति के अनुसार सर्वानुमति से निर्णय लिये। लड़की का भी इक भू-वितरण के कार्य में माना गया। बालिग-नाबालिगों को पूर्ण व्यक्ति समझ कर संख्या निर्धारित की गयी। इस तरह अनेक बातें तय हुईं।

गाँव के सर्वस्वदानियों की कुल संख्या ७१३ हैं, जिनमें ४२६ बीघा भूमि वितरित की गयी। हर एक व्यक्ति को १२ कट्ठा भूमि मिली। जन-आधारित वितरण आम सभा में गाँव के सभी पुरुष और बच्चों ने बड़े उत्साह से भाग लिया।

---

www.vinoba.in

राजस्थान

भरतपुर क्षेत्र में ता० २६ जनवरी से १२ फरवरी तक पदयात्राओं का विशेष कार्यक्रम हुआ। ३-४ फरवरी को राजस्थान-भूदान-यज्ञ-बोर्ड के मंत्री श्री पूर्णचंद्र जैन के कुळपतित्व में शिविर चला। भूदान-कार्यकर्ताओं के कॉलेज और हाईस्कूलों में प्रचारात्मक भाषण हुए। १६ फरवरी तक १५० मील भूदान-पदयात्रा में २३ बीघा भूमि प्राप्त हुई। ६५) की साहित्य-बिक्री हुई। सर्वोदय मेळे में ३००० गुण्डियाँ सूतांजलि में अर्पित की गयी। सर्वोदय पक्ष में सुजानगढ़ तहसील के २९ गाँवों में १२१ मील की पदयात्रा हुई। १२११ बीघा भूमि मिली।

ग्रामदानी ग्राम निर्माण-पथ पर

बीकानेर जिळे का सर्वप्रथम ग्रामदानी ग्राम "देदावतों का वेरा" नवनिर्माण की ओर तेजी से कदम बढ़ा रहा है। ३०-३१ जनवरी को ग्रामीणों की सर्व-सम्मति से ग्रामोदय-समिति का निर्माण किया। ग्रामोद्योगी वस्तुओं को अपने दैनिक जीवन में समाविष्ट करने के लिए पहली किस्त के रूप में गाँववालों ने यंत्रोद्योगी आटा, शक्कर, तेल व नकली घी का बहिष्कार करने का संकल्प किया व प्रतिमाह दो रोज सामूहिक श्रम करने का भी निश्चय किया। अतिथि-शाळा, मदरसा आदि के लिए संपत्तिदान भी प्राप्त हुआ। गाँव की बैठक में भाग लेने के लिए जिळे के प्रमुख कार्यकर्ता २५ गाँवों की १८१ मील की पदयात्रा करते हुए पहुँचे। कार्यकर्ताओं ने ग्रामदानी गाँव का सर्वे भी किया।

संवाद-सूचनाएँ :

सावधानी की सूचना

कानपुर-निवासी श्री सुरेशचन्द्र पाण्डेय, खादीग्राम (मुंगेर) में कुछ दिन रह कर दिसंबर में पू०धीरेन्द्र भाई का रेलवे-पास लेकर लापता हो गये। पुलिस उनकी तलाश में है। उन्होंने श्रम-भारती, खादीग्राम के नाम पर कहीं से पैसा भी लिया है। उनके पास यहाँ का एक लेटरपैड भी है। अतः सभी लोगों से, विशेषकर रचनात्मक कार्यकर्ताओं एवं संस्थाओं से प्रार्थना है कि वे इनसे सावधान रहें।

इसी प्रकार श्री विश्वनाथ सिंह, जो कि बनारस जिळे के रहने वाले हैं, यहाँ कुछ दिन से रहते थे। ता० १७ जनवरी, '५७ को यहाँ से आठ सौ रुपये लेकर गायब हो गये हैं। इसकी भी सूचना स्थानीय पुलिस को दी गयी है। सभी लोगों से, इनसे सावधान रहने की प्रार्थना है।

सर्व-सेवा-संघ या श्रम-भारती, खादीग्राम के नाम पर किसी भी भाई या बहन को बिना यहाँ के अधिकृत पत्र के कोई भी रकम या सामान न दिया जाय।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ, खादीग्राम —कृष्णराज, कार्यालय-मंत्री

प्रांतीय सूतांजलि संग्राहकों की सेवा में

सर्वोदय-दिन, ता० १२ फरवरी अब बीत चुका है। हर एक प्रांत में जगह-जगह सर्वोदय-मेळे लगे होंगे तथा सूतांजलि अर्पित हुई होगी। इन मेळों का तथा सूतांजलि-संग्रह का तफसीलवार विवरण आप यथा शीघ्र हमें भेजेंगे ही। लेकिन उसके पहले हमें निम्नलिखित जानकारी तुरंत भेजने का कष्ट करें :

(१) आपके प्रांत में किन-किन स्थानों पर सर्वोदय-मेळे लगे ? मेळा-संचालकों का पूरा पता देवें।

(२) अभी तक प्राप्त रिपोर्टों के आधार पर आपके प्रांत भर में जितनी सूतांजलि अर्पित हुई होगी-उसका मोटे रूप में एक आंकड़ा भेज देवें।

बाद में पूरा विवरण भेजते समय किन गांवों से कितनी सूतांजलि प्राप्त हुई, इसका जिक्र हो। यह सूची जिलावार रहे, जिसमें गांवों के नाम अकारानुक्रम से दे सकें, तो अच्छा रहेगा। —सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री

—विनोबाजी का अस्थाई पता: c/o श्री टी. के. श्रीनिवासन्, लोकसेवक १८१६, वेस्ट् रोड, तंजाऊर P. O. Tanjore (S.I.)

—विनोबाजी २० फरवरी ५७ से १८ अप्रैल ५७ तक मदुराई जिले के तिरुमंगलम् तालुका में घूमने वाले हैं।

"भूदान-यज्ञ"-प्रकाशन-वक्तव्य

(न्यूजपेपर-रजिस्ट्रेशन ऍक्ट (फॉर्म ५, नियम ८) के अनुसार हर एक अखबार के प्रकाशक को निम्न जानकारी पेश करने के साथ-साथ अपने अखबार में भी वह प्रकाशित करनी होती है। तदनुसार यह प्रतिलिपि यहाँ दी है : सं०)

"(१) प्रकाशन का स्थान	वाराणसी
(२) प्रकाशन का समय	सप्ताह में एक बार
(३) मुद्रक का नाम	पं० पृथ्वीनाथ भार्गव
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी
(४) प्रकाशक का नाम	सिद्धराज ढड्ढा
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ"साप्ताहिक,राजघाट, वाराणसी
(५) संपादक का नाम	धीरेंद्र मजूमदार
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ"साप्ताहिक,राजघाट,वाराणसी
(६) समाचार-पत्र के संचालकों का नाम-पता	अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ (सोसायटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट १८६० के सेक्शन २१ के अनुसार रजिस्टर्ड सार्वजनिक संस्था)

मैं, सिद्धराज ढड्ढा, यहाँ स्वीकार करता हूँ कि मेरी जानकारी के अनुसार उपर्युक्त विवरण सही है।

राजघाट, वाराणसी २८-२-५७ —सिद्धराज ढड्ढा, प्रकाशक

प्रकाशन-समाचार

भूदान-गंगा (तृतीय खण्ड)–विनोबा पृष्ठ ३२०, मूल्य १।।)

भूदान-गंगा के दो खण्ड पहले प्रकाशित हो चुके हैं। एक में हैं पोचमपल्ली से सन् ' ५२ के अंत तक के महत्त्वपूर्ण प्रवचन और दूसरे में हैं, '५३ व '५४ के। अब यह तृतीय खण्ड जनवरी '५५ से सितंबर '५५ तक के बंगाल और उड़ीसा में व्यक्त भूदान का क्रांतिकारी संदेश लेक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है, जिसमें भूदान-क्रांति के विभिन्न पहलुओं का विवेचन है। चतुर्थ और पंचम खण्ड प्रेस में जा रहे हैं।

मजदूरों से –विनोबा और जयप्रकाश नारायण पृष्ठ ३२, मूल्य =)

'भूदान-मजदूर-आंदोलन', 'सर्वोदयनिष्ठ मजदूर-संगठन' और 'ट्रस्टीशिप का क्रांतिकारी विचार' नामक तीन प्रवचन उक्त पुस्तक में संकलित हैं। पहले में विनोबाजी ने विवेचन किया है कि भूदान-आंदोलन मज़दूरों की श्रमशक्ति और मालिकों की व्यवस्था-शक्ति को कैसा समन्वित विकास करना चाहता है। जयप्रकाशजी ने मज़दूर-आंदोलनों की एकांगिता बताते हुए भूदान-आंदोलन द्वारा उसके सर्वांगीण विकास की रूपरेखा प्रकट की है। मोटे टाइप में छपी दो आने की यह पुस्तिका मज़दूरों की समस्याओं में रुचि रखने वाले प्रत्येक के लिए पठनीय है।

अ. भा. सर्व-सेवा-संघ, प्रकाशन, राजघाट, काशी

विषय-सूची

१. ग्रामदान द्वारा वर्णाश्रम-धर्म का नव-संस्करण	विनोबा	१
२. १९५७ में आर्थिक क्रांति का आवाहन	गोरा	२
३. जीवन दो टुकड़ों में नहीं बँट सकता !	विनोबा	३
४. बिहार के भूवितरण-आंदोलन के लिए सुझाव	पारसनाथ शर्मा	४
५. विनोबा के साथ श्रीमती चेस्टर बौल्स : २.	दामोदरदास मूंदड़ा	५
६. आत्मशक्ति का आवाहन	एस. वी. गोविंदन्	५
७. प्रयोग-शाळा की सिद्धि के बाद–	विनोबा	६
८. पराक्रम का आवाहन	धीरेंद्र मजूमदार	६
९. नयी ताळीम के समस्त सेवकों से–	—	७
१०. जिळा-सेवकों का लक्ष्य	विनोबा	७
११. निधिमुक्ति और दान-धर्म का विकेंद्रीकरण	अप्पासाहब पटवर्धन	८
१२. सर्वोदय का पाठ (गीत)	सतीश कुमार	९
१३. विनोबाजी का स्वास्थ्य	दामोदरदास मूंदड़ा	९
१४. तमिळनाड की भूदान-यज्ञ-वार्ता	मीरा व्यास	१०
१५. तमिनाड़ की क्रांतियात्रा से	दामोदरदास मूंदड़ा	११
१६. भूदान-समाचार, संवाद-सूचनाए आदि	—	११-१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : पोस्ट बॉक्स नं० ४१, राजघाट, काशी

www.vinoba.in